ॐ

वर्ष-4, अंक-23, 1-15 दिसम्बर, 2019 (पाक्षिक)

चाणक्य वार्ता

ISSN 2456-1207

मूल्य : 50 रुपये

कुल पृष्ठ 48

राजभाषा हिन्दी की संपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका

हमारा संविधान भाव एवं रेखांकन का भव्य विमोचन सम्पन्न

फिर भी हर मोर्चे पर विफल है सरकार

उत्तर प्रदेश–कौशाम्बी का खाद्य प्रसंस्करण उद्योग (केला)

ब्रेन ड्रेन से दो चार तो नहीं होना पड़ेगा पंजाब को

परिवर्तन की ओर जम्मू-कश्मीर

महाराष्ट्र में उद्धव सरकार

भगवान महावीर (मोलेम) नेशनल पार्क गोवा

उड़ीसा के शक्तिपीठ

साथ ही सभी अन्य स्थायी स्तम्भ

नई दिल्ली स्थित कंस्टीट्यूशन क्लब में चाणक्य वार्ता द्वारा आयोजित समारोह में 'हमारा संविधान : भाव एवं रेखांकन' का विमोचन करते हुए (मध्य में) केंद्रीय संसदीय कार्य राज्यमंत्री श्री अर्जुनराम मेघवाल, केंद्रीय स्वास्थ्य राज्यमंत्री श्री अश्विनी कुमार चौबे, वरिष्ठ संघ प्रचारक श्री इन्द्रेश कुमार, सुप्रसिद्ध चिंतक श्री के.एन. गोविंदाचार्य, पुस्तक के लेखक श्री लक्ष्मीनारायण भाला, टीटी ग्रुप के चेयरमैन डॉ. रिखव चंद जैन (बायीं ओर) राज्यसभा के पूर्व महासचिव डॉ. योगेन्द्र नारायण, भाजपा के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष एवं दिल्ली प्रभारी श्री श्याम जाजू व 'चाणक्य वार्ता' के सम्पादक डॉ. अमित जैन

दुष्ट इंसान की मीठी बातों पर कभी भरोसा मत करो। वह अपना मूल स्वभाव कभी नहीं छोड़ सकता, जैसे शेर कभी हिंसा नहीं छोड़ सकता — आचार्य चाणक्य

Scanned with CamScanner

डॉ. कुलदीप कुमार

राग-द्वेष का मूल है स्वयं को न जानना

उपरिलिखित शीर्षक को पढ़कर अवश्य ही ऐसा प्रतीत होता होगा कि यह कैसी बेतुकी या अजीब बात है कि स्वयं को न जानना। भला ऐसा भी कभी सम्भव हो सकता है कि व्यक्ति स्वयं को न जाने। किन्तु इसका उत्तर है कि हाँ, ऐसा भी संभव है और सम्भव ही नहीं अपितु ऐसा ही है। हम में से अधिकांश व्यक्ति ऐसे हैं जो स्वयं को नहीं जानते। आप किसी भी व्यक्ति से पूछिये आप कौन हैं? वह तुरन्त उत्तर देगा कि मैं सुरेश कुमार हूँ, राकेश कुमार हुँ, हेमलता हुँ इत्यादि। लेकिन उक्त सभी नाम व्यवहारिक दृष्टि से तो ठीक हैं क्योंकि इनके बिना हमारा लोक व्यवहार नहीं चल सकता, लेकिन इन्हीं को स्वयं को जानना मान लेना नितान्त भ्रम के अतिरिक्त कुछ नहीं है। क्योंकि पारमार्थिक दृष्टि से तो हम एक ज्ञान-दर्शनमय आत्मा हैं तथा इसी आत्मा को जानना ही स्वयं को जानना है जो कि शरीर से बिलकुल भिन्न है, क्योंकि शरीर तो अजीव पुद्गल है, शरीर में से आत्मा के निकलते ही वह निष्क्रिय हो जाता है और हम इस शरीर को ही स्वयं को जानना मान लेते हैं और यही हमारे दु:खों का मूल कारण है, इसीलिये सभी भारतीय दार्शनिकों ने स्पष्ट उद्घोष किया है कि 'आत्मानं विधि' अर्थात् स्वयं को जानो।

विश्व के सभी जीव सुख प्राप्त करना चाहते हैं लेकिन, फिर भी वे न्यूनाधिक रूप में दुखी ही दिखाई पड़ते हैं सभी जीवों में मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ माना जाता है, क्योंकि उसे विवेक की शक्ति प्राप्त है, जिसका सदुपयोग कर वह सच्चे सुख के सम्बन्ध में चिन्तन और मनन कर सकता है और समुचित साधना को अपना कर सच्चे सुख और शान्ति को प्राप्त कर सकता है और इसका सर्वोत्तम उपाय है स्वयं को जानकर अपने आप को शरीर, मन, इन्द्रियों एवं इन्द्रिय विषयों से भिन्न जानना। अधिकांश लोगों को देखा जाता है कि उक्त विषयों में सुख ढूँढ़ने का प्रयत्न करते रहते हैं जो कि सुख का आभास मात्र होता है, जिसके कारण उन्हें हमेशा असन्तोष, अशान्ति और निराशा हाथ लगती है, क्योंकि वास्तविक सुख और शान्ति तो आत्मा के स्वाभाविक गुण हैं जो कि बाहरी वस्तुओं से प्राप्त नहीं किये जा सकते हैं। अत: सुख-शान्ति को प्राप्त करने के लिए परमावश्यक है कि आत्मा स्वयं को स्वयं में लीन करके अपने निज स्वरूप को पहचाने। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि इस निज स्वरूप को जानें कैसे? तो इसका उत्तर यह है कि शास्त्रों में इसके अनेक उपाय बतलाए गये हैं तथा यह कहना कोई अतिशयोक्ति नही होगा कि शास्त्रों में सबसे अधिक प्रतिपादन इसी विषय का हुआ है। लेकिन इसे जानने व समझने का हम प्रयत्न नहीं करते। यहाँ पर एक बात और ध्यातव्य है कि इस ज्ञान अथवा इस विद्या को बतलाने वाले भी वर्तमान में दुर्लभप्राय हैं। इस सन्दर्भ में अद्योलिखित पद्य द्रष्टव्य है।

''गणिकचिकित्सिकतार्किकपौराणिकवास्तुशब्दमर्मज्ञा:।
संगीतादिषु निपुणा: सुलभा: न हि तत्त्ववेत्तार:।।''

अर्थात् इस संसार में गणना करने वाले (एकाउटेंट), वैद्य, वकील, पुराणों की कथा करने वाले, घर बनाने वाले, शब्दों का ज्ञान देने वाले (वैयाकरण) और संगीत आदि की कला सिखाने वाले सभी सुलभ हैं, आसानी से मिल जाते हैं लेकिन, तत्त्व की बात बतलाने वाले अर्थात् आत्मा की बात बतलाने वाले अत्यन्त दुर्लभ हैं जिसकी सबसे ज्यादा आवश्यक्ता है। यथा—

''धन कन कंचन राजसुख, सभी सुलभकर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक यथार्थ ज्ञान।।''

किन्हीं कवि ने एक बहुत सुन्दर बात लिखी है कि मनुष्य की 72 कलाएं हैं लेकिन उसमें से दो कलाओं में अवश्य ही निपुण होना चाहिए। उनमें से एक कला तो है जीविका की जिससे हमारी घर गृहस्थी सुचारू रूप से चल सके तथा दूसरी कला है स्वयं को जानने की जिससे इस जीव का उद्धार हो सके तथा वास्तविक सुख की प्राप्ति हो सके, यथा—

''कला बहत्तर पुरुष की, जामें दो सरदार
एक जीव की जीविका, दूजी जीवोद्धार।।''

उक्त स्वयं को जानने अर्थात् आत्मज्ञान के लिए विभिन्न पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया गया है। यथा-आत्मानुभूति, आत्मानुभव, आत्मसाक्षात्कार, आत्मसंवित्ति, आत्मज्ञान, आत्मध्यान, आत्मलीनता, आत्मरसपान, आत्मरूचि, आत्मदर्शन, आत्मप्राप्ति, आत्मभावना, आत्मलाभ, आत्मवेदना, आत्माराधना, आत्मसाधना, आत्मरमणता, आत्मजाग्रति, आत्मजागरण, अन्त:सुखवेदना अतीन्द्रियदशा, धर्मध्यान, ध्यान, समाधि, निर्विकल्पदशा, निश्चयपूजा, निश्चयक्षमा, निश्चयब्रह्मचर्यादि, परमसामायिक, परमध्यान, परमालोचना, परमार्थप्रतिक्रमण, भेदविज्ञान, भेदभावना, योग, शुद्धचारित्रा, शुद्धात्मानुभूति, सामायिक, शुद्धोपयोग नैष्कर्म्यावस्था इत्यादि।

उक्त आत्मानुभूति के सन्दर्भ में मूर्धन्य मनीषी गणेशप्रसादजी वर्णी के कुछ पद्य चिन्तनीय एवं मननीय हैं जिनमें इस भटके हुए जीव को परमानन्दमय स्वरूप को प्राप्त करने के लिए प्रेरणा प्रदान की गई है। यथा—

''इस भव वन के मध्य में, जिन बिन जाने जीव।
भ्रमण यातना सहनकर, पाते दु:ख अतीव।।''

'जिन' (राग द्वेष आदि दोषों पर विजय प्राप्त कर चुके सच्चे मार्गदर्शक) को जाने बिना जीव इस संसाररूपी वन के बीच आवागमन का कष्ट सहते हुए अपार दु:ख उठाते हैं।

''कब आवे वह सुभग दिन, होवे अपनी सूझ।
पर पदार्थ को भिन्न लखे, होवे अपनी बूझ।।''

Scanned with CamScanner

अगस्त २०१६
(वै.२०७६)
श्रावणकृष्ण-अमावस्यातः भाद्रपदशुक्लप्रतिपदा-पर्यन्तम्
ISSN:2347-156
मूल्यम्- २५ रूप्यक

संस्कृत-चन्द्रिका

मासिकी संस्कृत-बालपत्रिका

वर्षम् ७ अङ्कः १

सम्पादकः
डॉ. जीतराम भट्टः
सचिवः

Scanned with CamScanner

ISSNT-2347-1565

मूल्यम्-₹ २५ रूप्यकाणि

संस्कृत-चन्द्रिका

'मासिकी संस्कृत-बाल-पत्रिका'

वर्षम्-७ अङ्कः १
(अगस्त २०१६)
(वै०.२०७६)
(श्रावण कृष्ण अमावस्या तः भाद्रपद शुक्ल प्रतिपदा पर्यन्तम्)

सम्पादकः
डॉ.जीतराम भट्टः
सचिवः

सहायकसम्पादकः
प्रद्युम्नचन्द्रः

पत्रिका-परामर्शकाः
डॉ. आशुतोषदयाल माथुरः
डॉ. पंकजा घई
डॉ. पूर्वा भारद्वाजः
डॉ. धनञ्जयमणि त्रिपाठी

क्र.सं.	अनुक्रमणिका	←→	पृष्ठ संख्या
१.	सम्पादकीयम्		III
२.	"जगद्धात्रि! नमस्तुभ्यम्"	डॉ. अञ्जु बाला	१
३.	ईशनिन्दकः	डॉ. केशवरामः शर्मा	२
४.	साक्षरताऽत्र वर्णिता	डॉ. रामकिशोर मिश्रः	३
५.	ऋग्वेदे आयुर्वेदाभिव्यक्तिः	डॉ. कैलाशनाथः द्विवेदी	४
६.	सत्यवादी बालकः	डॉ. केशवरामः शर्मा	७
७	वन्दे शारदाम्	डॉ. धनंजयकुमार मिश्रः	८
८.	अध्ययने अन्तर्जालस्य उपयोगिता	डॉ. कृष्णप्रसाद उपाध्यायः	९
९.	निद्रोपासना कर्तव्या	डॉ. रामकिशोर मिश्रः	१०
१०.	अध्यात्मशब्दस्यार्थः	डॉ. कुलदीप कुमारः	११
११.	यादवायश्चवासिना	श्री रामः शर्मा	१३
१२.	'सोशल मीडिया' इत्यस्य सदुपयोगः	डॉ. कृष्णप्रसाद उपाध्यायः	१४
१३.	उपनिषद् भारतस्य सर्वश्रेष्ठं साहित्यम्	डॉ. रामकिशोर मिश्रः	१५
१४.	विचित्र प्रश्नः	आचार्य डॉ. केशवरामः शर्मा	१६
१५.	स्वच्छताबोधः	डॉ. अनीता अग्रवालः	१७
१६.	प्रथमं शैलपुत्री	डॉ. गदाधरः त्रिपाठी	१९
१७.	शिरोवेदना न भविष्यति	श्रीमती सुषमा	२१

दिल्ली संस्कृत अकादमी
(राष्ट्रिय राजधानी क्षेत्रम्, दिल्लीसर्वकारः)
DELHI SANSKRIT ACADEMY
(Govt. of N.C.T., Delhi)

Scanned with CamScanner

अध्यात्मशब्दस्यार्थः

- डॉ. कुलदीप कुमारः

अस्य विश्वस्य सर्वेषु दर्शनेषु प्रायशः अध्यात्मविद्यायाः चर्चा उपलभ्यते। तथेदमपि उच्यते यत् वयं सर्वे आध्यात्मिकाः भवेमः। परन्तु न्यूना जनाः एतादृशाः सन्ति यत् अध्यात्मशब्दस्य अर्थगाम्भीर्यम् अवगच्छन्ति। केचन जनाः तु एतादृशाः सन्ति यत् ये पूजा-पाठ-दान-व्रत-तीर्थयात्रादि क्रियाः एव अध्यात्ममिति जानन्ति, परन्तु तेषां एतादृशी मान्यता नितान्तभ्रमपूर्णा अस्ति। यतोहि एताभिः क्रियाभिः पुण्यस्य प्राप्तिरस्तु भवितुं शक्नोति येन अस्माकं भौतिकसमृद्धिरपि प्राप्तुं शक्यते, परन्तु आध्यात्मिकलक्ष्यस्य प्राप्तिः कथमपि न लभ्यते।

अध्यात्मं तु आत्मविकासस्य एका कला वर्तते। अध्यात्मस्य अर्थोऽस्ति-निजज्ञानम्। स्वमाध्यमेन स्वस्य ज्ञानम्। अध्यात्मं तु तत् विज्ञानमस्ति यत् अदृश्यस्य ज्ञानं कारयति। अद्यत्वे वैज्ञानिकयुगः प्रचलति तस्मात् जनाः विज्ञानमेव अध्यात्मम् अवगच्छन्ति परन्तु तेषामपि एतादृशी मान्यता समीचीना नास्ति। यतोहि विज्ञानं तु तत् ज्ञानमस्ति-यत् दृश्यजगतः ज्ञानं कारयति न तु अदृश्यस्य।

अस्माकं भारतदेशः तु अनादिकालादेव आध्यात्मिकोऽस्ति। अत्र तु तिले तैलवत् जीवनस्य प्रत्येकप्रयसङ्गे अध्यात्मेव दृश्यते। अत्र एतादृशी उक्तिरपि प्रसिद्धास्ति- 'कंकर-कंकर में शंकर है' अस्यापि अत्र अभिप्रायोऽयमेवास्ति यत् प्रत्येकस्मिन् वस्तूनि अत्र अध्यात्मं राजते। अत्र अध्यात्मविद्या विश्वस्य सर्वासु विद्यासु सर्वोपरि वर्तते तथा अध्यात्मविद्यामेव शाश्वतिकी, पारमार्थिकी च स्वीक्रियते। अन्याः विद्याः तु वर्तमानजन्मनः एव उद्धारं करोति परन्तु अध्यात्मविद्या तु जन्मजन्मान्तरस्य उद्धारं करोति।

वयमत्र जैनाचार्याणां दृष्ट्या अध्यात्मशब्दस्य कोऽर्थ? अस्मिन् सन्दर्भे किञ्चित् विचारयामः।

अध्यात्मशब्दस्य अर्थः- आत्मनः सम्बद्धम् इति। अर्थात् आत्मनः अधिकृत्य कृतः विचारः अध्यात्मविचारः इत्युच्यते। आत्मपदेन च येषां दर्शने आत्मपरमात्मनोः भेदः स्वीकृतः तन्मते परमात्मनोऽपि सम्बद्धचिन्तनमध्यात्मचिन्तनं भवति।

अध्यात्मशब्दस्य व्युत्पत्तिः-'निजशुद्धात्मनि विशुद्धाधारभूतेऽनुष्ठानमध्यात्मम्। अर्थपदानामभेद-रत्न-त्रयप्रतिपादकानामनुकूलं यत्र व्याख्यानं क्रियते तदध्यात्मशास्त्रं भण्यते। मिथ्यात्वारागादिसमस्त- विकल्पजालरूपपरिहारेण स्वशुद्धात्मन्यनुष्ठानं तदध्यात्ममिति।

आत्मा, जीव या चैतन्य का आधार मानकर जो एकाग्र चिन्तन, मनन तथा आचरण किया जाता है, जैन परम्परा में उसे अध्यात्म की संज्ञा प्रदान की गई है।

अनेकैर्विद्वभिः शोधपूर्णाध्ययनेन सिद्धं कृतमस्ति यत् सम्पूर्णभारतीय वाङ्मयस्य

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

कविताएं

23 पहचान : देवेंद्र दीपक
23 फर्ज : नीलम त्रिखा
23 स्वागतम् नूतनवर्ष : मुकेश कुमार ऋषि वर्मा

पुस्तक समीक्षा

25 कॉर्पोरेट जगत की सच्चाइयों को बेनकाब करता है व्यंग्य उपन्यास 'जॉब बची सो' : दीपक गिरकर
27 'भारत के पूर्वोत्तर में उग्रवाद' पूर्वोत्तर के उग्रवाद पर प्रामाणिक पुस्तक : डॉ. वीरेन्द्र परमार

विविध

28 गोम्मटेश बाहुबली—माँ के संकल्प और सम्मान की प्रतिष्ठा : डॉ. दिलीप धींग
31 वाल्मीकि रामायण में शबरी (श्रमणी) प्रसंग : प्रो. फूलचन्द जैन प्रेमी
33 जीवन मूल्य एवं नैतिक मूल्यों का महत्व : डॉ. कुलदीप कुमार
34 संगठित समाज-सशक्त समाज : डॉ. सुनीता अग्रवाल
36 संस्कार : सुरेश जैन

समाचार जगत

38 खबरों में देश-विदेश : सोनम जैन
39 उत्तर भारत की खबरें : विशाल शर्मा/शैलेन्द्र जैन
40 पूर्वोत्तर भारत की खबरें : राजीब अगस्ती/आलोक सिंह
41 दक्षिण भारत की खबरें : नवरतन पिंचा जैन/वेद प्रकाश पाण्डेय
42 पश्चिम भारत की खबरें : धीरेन बरोट/आशा सिंह देवासी

जॉब अलर्ट

44 सरकारी नौकरियों में अवसर : सी.ए. स्वीटी जैन

सबरंग

45 सिनेमा व टी.वी. : डॉ. महेश्वर

बिक्री केन्द्र

46 सूची-पत्रिका बिक्री केन्द्र

देश भर में 'चाणक्य वार्ता' के प्रतिनिधि

राज्य ब्यूरो चीफ
धीरेन्द्र कुमार मिश्र, नई दिल्ली
डॉ. अमर सिंहल, जयपुर, राजस्थान
शैलेन्द्र जैन, लखनऊ, उत्तर प्रदेश
डॉ. गुलाब सिंह, यमुना नगर, हरियाणा
रमेश गुप्ता, उधमपुर, जम्मू-कश्मीर
एस.के. व्यास, जलंधर, पंजाब
चिरंजीव जैन, गुवाहाटी, असम
आलोक सिंह, शिलांग, मेघालय
शुभांशु दास, धर्मनगर, त्रिपुरा
तुम्बम रीबा 'लीली', ईटानगर, अरुणाचल प्रदेश
हुई जेलियांग, दीमापुर, नागालैंड
डॉ. ललमुआनओमा साइलो, आईजोल, मिजोरम
किरन कुमार, इम्फाल, मणिपुर
डॉ. छुकी लेप्चा, गंगटोक, सिक्किम
वेद प्रकाश पाण्डेय, बेंगलुरु, कर्नाटक
ईश्वर करुण, चेन्नई, तमिलनाडु
जी. गौरीशंकर, हैदराबाद, तेलंगाना
उमा महेश्वर रेड्डी, विजयवाड़ा, आंध्रप्रदेश
श्रीकांत कण्णन, पुडुचेरी
अरुण लक्ष्मण, तिरुवन्तपुरम, केरल
धीरेन बरोट, अहमदाबाद, गुजरात
अमोस छेत्री, पणजी, गोवा
विनायक भिषे, सतारा, महाराष्ट्र
आदेश ठाकुर, रायपुर, छत्तीसगढ़
सियानंद मंडल, पटना, बिहार
राकेश रघुवंशी, राँची, झारखंड
प्रकाश बेताला, भुवनेश्वर, ओड़िशा

नेशनल मार्केटिंग हेड
पीयुष जैन, नई दिल्ली
मो. 9897096111

नेशनल सोशल मीडिया हेड
आदित्य जैन, यमुनानगर

जिला ब्यूरो चीफ
अविनाश पाठक, नागपुर, महाराष्ट्र
अनमोल जैन, मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश
सुनीता गोस्वामी, मथुरा, उत्तर प्रदेश
डॉ. डी.के. अस्थाना, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश
संजय सक्सेना, कानपुर, उत्तर प्रदेश
सोनम जैन, दिल्ली
इन्द्रमोहन मिश्रा, हरिद्वार, उत्तराखंड
अजय भट्ट, देहरादून
जगबीर सिंह पाल, जम्मू
ए. रणजीत, आईजोल, मिजोरम

नोट : देश के कोने-कोने में आप अपने समाचार पत्र हॉकर के माध्यम से घर बैठे 'चाणक्य वार्ता' पत्रिका मँगा सकते हैं। यदि आपको पत्रिका मिलने में कठिनाई होती है, तो आप 'चाणक्य वार्ता' के प्रसार कार्यालय, नई दिल्ली में 8586858285 पर सम्पर्क कर सकते हैं अथवा

chanakyavarta@gmail.com पर ई-मेल भी कर सकते हैं।

—प्रसार प्रबंधक

© सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक, प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। प्रकाशित रचनाओं के विचार से 'चाणक्य वार्ता' पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अंतर्गत विचारणीय रहेंगे।

इंटरनेशनल दिव्य परिवार सोसाइटी, नई दिल्ली का पाक्षिक प्रकाशन

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक अमित जैन के लिए विकास कम्प्यूटर एंड प्रिंटर्स, द्रोनिका सिटी, लोनी, गाजियाबाद से मुद्रित एवं ए-28, मनसाराम पार्क, नई दिल्ली से प्रकाशित।

सम्पादक : अमित जैन।

आवरण व लेआउट : स्वपन कम्यूनिकेशन, दिल्ली

वेबसाइट : www.chanakyavarta.com

Scanned with CamScanner

डॉ. कुलदीप कुमार

जीवनमूल्य एवं नैतिक मूल्यों का महत्त्व

यद्यपि प्राचीन वाङ्मय में एक कला के रूप में जीवन की चर्चा मिलती है। वैसे मूल्यपरक चिन्तन पाश्चात्य दर्शन का एक प्रमुख अंग है जो कि मूल्यमीमांसा के रूप में विख्यात है, अत: हम यहाँ पर सर्वप्रथम यह देखते हैं कि जीवनमूल्य होते क्या हैं? वास्तव में देखा जाए तो जो तत्त्व जीवन को उन्नत बनाते हैं उन्हें जीवन मूल्य कहते हैं। वे शारीरिक, मानसिक, वाचिक और भौतिक भी हो सकते हैं। अत: कहा जा सकता है कि—

- जिनसे जीवन मूल्यवान (श्रेष्ठ) बने, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक विकास हो उन्हें कहते हैं—जीवनमूल्य।
- जिनके बिना जीवन जीवन नहीं होता है उन्हें कहते हैं—जीवन मूल्य।
- जिनके बिना जीवन अधूरा रह जाता है, उन्हें कहते हैं—जीवन मूल्य।
- जिनके द्वारा जीवन को सार्थक बनाया जा सके, उन्हें कहते हैं—जीवन मूल्य।
- जिनके द्वारा जीवन अनमोल होता है, उन्हें कहते हैं—जीवन मूल्य।
- जिन मूल्यों के बिना जीवन मूल्यरहित हो जाता है, उन्हें कहते हैं—जीवन मूल्य।

नैतिकता एक ऐसा शब्द है जो बोध कराता है किसी व्यक्ति के जीवन के आदर्शों की जिस समाज में वह रहता है उसके सामाजिक सम्बन्धों तथा उसके राष्ट्र की सभ्यता और संस्कृति की नैतिकता तथा विवेक की शक्ति से पूर्व किसी भी व्यक्ति को कभी भी अपने जीवन में किसी भी प्रकार की असफलता का सामना नहीं करना पड़ता। वह अपने निर्मल हृदय तथा मधुर वाणी द्वारा प्रत्येक आपदा को पार कर विश्व विजय की शक्ति रखता है। नैतिक सीमा के अंतर्गत रहने वाला व्यक्ति न केवल अपने चरित्र का सकारात्मक रूप से निर्माण करता है। अपितु ऐसा करते समय वह अपने समाज तथा राष्ट्र के निर्माण में अपना सहयोग भी देता है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार से नम्र रूप धारण किए हुए निर्मल जल की धारा पर्वत, पहाड़ों, मैदानों को आसानी से पार करते हुए अपने लक्ष्य की ओर बढ़ती जाती है, अत: लक्ष्य की प्राप्ति करती है परन्तु उसके रास्ते में आने वाला पत्थर जो कि कठोर तथा कभी न झुकने वाला होता है, अपनी हठधर्मिता के कारण यथास्थान बना रहता है। इसी प्रकार से जीवन में नम्र रहने वाले व्यक्ति सदैव विकासशील बने रहते हैं तथा अनैतिक अभद्र भाषी सदैव यथास्थित। इस प्रकार नैतिक शक्तिधारक प्रत्येक कार्य करने की चुम्बकीय शक्ति रखते हैं।

"नम्रता ही नम्रता की जननी है"—यदि हम इस कहावत का विश्लेषण करें तो पाते हैं कि हम किसी अन्य व्यक्ति से नम्र होने की आशा तब तक नहीं कर सकते जब तक कि हम स्वयं उसके प्रति नम्र नहीं हैं। अपने सार्वजनिक जीवन में नित्य क्रियाकलाप करते हुए हम अनेक व्यक्तियों के सम्पर्क में आते हैं परन्तु यदि हम अपने जीवन में कृपया, धन्यवाद, माफ कीजिए जैसे शब्दों का प्रयोग करते हैं तो हम अपने ही व्यक्तित्व का स्वरूप निखार रहे होते हैं। मधुरता तथा नैतिकता की शक्ति द्वारा हम किसी भी व्यक्ति से किसी भी प्रकार का कार्य आसानी से करा सकते हैं।

व्यवहार में सभी मनुष्यों को अपनी ओर आकृष्ट करने की इतनी प्रबल शक्ति है कि कोई भी उससे प्रसन्न हुए बिना नहीं रह सकता परन्तु इसके पश्चात् भी बदले में यदि वह हमसे अभद्र व्यवहार करता है तो हमें अपना धैर्य नहीं खोना चाहिए। हमें सदैव यह याद रखना चाहिए कि हमारी नैतिकता, विवेक तथा हमारे द्वारा किया जाने वाला कृत्य हमारा स्वर प्रदर्शित करता है तथा सामने वाले व्यक्ति का अभद्र व्यवहार उसका स्तर प्रदर्शित करता है। अत: कितनी भी विषम परिस्थितियों में हमें अपना स्तर नहीं गिराना चाहिए। 'जैसे को तैसा' वाली नीति का परिपालन नहीं करना चाहिए। उस व्यक्ति के प्रति भी हमें मन में प्रेम रखना चाहिए। महात्मा बुद्ध ने अपने एक उपदेश में कहा था कि "नफरत-नफरत से कभी कम नहीं होती नफरत प्रेम से ही कम होती है, यही सर्वदा उसका स्वभाव है"।

हमें मात्र वार्तालाप में ही नैतिकता का समावेश नहीं करना चाहिए अपितु अपने निर्मल मन द्वारा अपने प्रत्येक कृत्य में नैतिकता को अवतरित करना चाहिए। हमें दयाभावी, परोपकारी, सद्व्यवहारिक तथा विवेकशील बनना चाहिए। प्रत्येक कार्य करने से पहले भली प्रकार विचारना चाहिए कि जो हम करने जा रहे हैं क्या वह हमारे स्वयं के लिए तथा समाज के लिए लाभदायक है 'महाकवि तुलसीदास' ने अपने जीवन में नैतिकता का पालन करते हुए कहा था कि "सारे संसार को सीता राममय जानकर मैं दोनों हाथ जोड़कर सबको प्रणाम करता हूँ"।

सभ्यता तथा संस्कृति का धनी हमारा देश सदा से ही नैतिक मूल्यों में भी धनी बना रहा है। यहाँ एक ओर जहाँ अहंकार भी उपजा है वहीं नैतिकता सदैव उससे बलवती रूप लेकर प्रकट हुई है केवल भारत के सन्दर्भ में ही नहीं यदि हम सम्पूर्ण विश्व के परिदृश्य में देखें तो हम इस निष्कर्ष पर पहुचेंगे कि आज तक विश्व में जितने भी महान् व्यक्ति हुए हैं उनकी महानता का सबसे बड़ा कारण विनम्र, दयालु तथा परोपकारी होना है। टालस्टॉय, सुकरात से लेकर विवेकानन्द तथा महात्मा गाँधी तक सभी महापुरुषों का जीवन नैतिक मूल्यों से ओत प्रोत था।

शेष पृष्ठ 35 पर

Scanned with CamScanner

मासिकी

ISSN 2278-0416

हरिप्रभा

अन्ताराष्ट्रिया मूल्याङ्किता मासिकी शोधपत्रिका

An International Refereed Monthly Research Journal

वर्षम् : १७, अंङ्क : ०१, जनवरी - २०२०

हरित्वता वर्चसा सूर्यस्य श्रेष्ठै रूपैस्तन्वं स्पर्शयस्व।
अस्माभिरिन्द्र सखिभिर्हुवानः सध्रीचीनो मादयस्वा निषद्य॥

(ऋक्० १०/११२/३)

हरियाणा संस्कृत अकादमी, पंचकूला

Scanned with CamScanner

अनुक्रमणिका

		पृष्ठसंख्या
सम्पादकीयम्		३
१. श्रीमद्भगवद्गीतायाः महत्त्वम्	सुधाकरकुमारपाण्डेयः	५
२. गीता सुगीता कर्तव्या	दीपक कुमार	१०
३. इको यणचीति सूत्रसमीक्षणम्	डॉ. अशोककुमारमिश्रः	१६
४. शाब्दबोधे मुख्यविशेष्यत्वम्	पीताम्बर पौडेल	२०
५. जैनदर्शने पञ्चाचारः	डॉ. कुलदीपकुमारः	२३
६. जैनदर्शने जीव विवेचनम्	श्री रवि	२८
७. हरियाणा-संस्कृत-अकादम्याः गतिविधियः	डॉ. प्रतिभा वर्मा	४०

*****

Scanned with CamScanner

जैनदर्शने पञ्चाचारः

*डॉ. कुलदीपकुमारः

वृत्तं यत्नेन संरक्षेद्, वित्तमेति च याति च।
अक्षीणो वित्ततः क्षीणो, वृत्ततस्तु हतो हतः॥

आचारः शब्दः (आ+चर्+घञ्) आ उपसर्गपूर्वकं चरधातोः घञ्प्रत्यये सति निष्पद्यते। यस्यार्थो भवति-आचरणम्, व्यवहारः, कार्यः, रीतिः, परम्परा इत्यादयः।[1]

कस्यापि भावस्य, समाजस्य राष्ट्रस्य विकासस्य मूलाधारः आचार एव भवति। आचारस्याधारेण एव समृद्धविचारः जीवनस्य नियामकः एवमादर्शश्च भवति। वस्तुतः विचारस्य जन्मभूमिः आचार एव। शाब्दिकदृष्ट्या आचारस्यार्थ आचर्यते इति आचारः।

वैदिकवाङ्मयस्य आचार्येऽपि 'आचारः प्रथमो धर्मः' इत्युक्तम्। आचार्यमनुः[2] आचार्यव्यासः[3] इत्यादिभिः वैदिकऋषिभिः आचार एव धर्मोत्पत्तिस्थानं कथितमस्ति- 'आचारः प्रथमोधर्मः'। आचार्यपाणिनिः[4] प्रभवस्यार्थः प्रथमप्रकाशनं स्वीकरोति। अर्थात् आचार एव धर्मस्य मेरूदण्डः वर्तते, विना धर्मं नैव स्थातुं शक्नोति।

सम्पूर्णे विश्वेऽस्मिन् यावन्तः प्राणिनः सन्ति तेषु मनुष्यः श्रेष्ठप्राणी अस्ति, सर्वेषु ज्ञानी श्रेष्ठः ज्ञानिषु च आचारवान् श्रेष्ठतमः विद्यते। धर्मार्थकाममोक्षेषु पुरुषार्थचतुष्टयेषु आचारः बहूपयोगी वर्तते। मोक्षप्रासादे प्रवेशाय आचारः भव्यद्वारः विद्यते। जैनवाङ्मये आचारस्य अत्यन्तगूढार्थः विद्यते। तस्य लक्षणभेदाश्च सन्ति। मूलतः जैनवाङ्मये आचारस्य भेदद्वयमस्ति-

मुनि-आचारः- मुन्याचारः, श्रमणाचारः
श्रावकाचारः- गृहस्थाचारः, उपासकाचारः

सुदृङनिवृत्तपसां मुमुक्षोर्निर्मलकृतौ।
यत्नो विनय आचारो वीर्याच्छुद्धेषु तेषु तु॥[5]

अर्थात्- सम्यग्दर्शनं, सम्यग्ज्ञानं, सम्यक्चारित्रं, तप-आदीनां निर्दोषं कर्तुं यत्नः क्रियते, स एव विनय उच्यते, एवमेतेषु निर्दोषेषु स्वशक्तिं बिना सत्यत्नः क्रियते तदेव आचारः कथ्यते।

दसणणाणचारित्ते सव्वे विरियाचरहिन पंचविहे।
वोच्छं अदिचारेऽहं कारिदं अणुमोदिदे अकदो॥[6]

सम्यग्दर्शनाचारः ज्ञानाचारः चारित्र-चारः, तपआचारः, वीर्याचारः च एवं प्रकारेण एतेषु पञ्च आचारेषु कृतकारितानुमोदनाद्वारा जायमानविचारं वर्णयाम्यहम्।

---

* *सहायकाचार्य; जैनदर्शन विभाग; श्री लालबहादुरशास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली-११००१६, दूरभाषः - ९५६०२५०११७*

Scanned with CamScanner

UGC - CARE LISTED

ISSN: 0974-8946

अनुसन्धान-प्रकाशन-विभागीया त्रैमासिकी शोध-पत्रिका

शोध-प्रभा

(A Refereed & Peer-Reviewed Quarterly Research Journal)

45 वर्षे द्वितीयोऽङ्कः (अप्रैलमासाङ्कः) 2020

प्रधानसम्पादकः
प्रो.रमेशकुमारपाण्डेयः
कुलपतिः

सम्पादकः
प्रो.शिवशङ्करमिश्रः

सहसम्पादकः
डॉ.ज्ञानधरपाठकः

श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः
केन्द्रीयविश्वविद्यालयः
नवदेहली-16

Scanned with CamScanner

हिन्दी विभाग

10.	भारतीय सभ्यता एवं संस्कारों का आधार- श्रौतयज्ञ	डॉ. सुन्दर नारायण झा	78-85
11.	महर्षि दयानन्द की दृष्टि में ब्रह्मविचार	डॉ. सुनीता सैनी	86-91
12.	प्रातिशाख्यों में पद-पाठ का महत्त्व एवं पद सम्बन्धी नियम	डॉ. डम्बर प्रसाद पौडेल	92-96
13.	प्रमुख उपनिषदों में शरीर के रूपक का मूल निवास-स्थान निर्धारण	डॉ. मेघराज मीणा	97-102
14.	योगदर्शन का उत्स है उपनिषद्	डॉ. करुणानन्द मुखोपाध्याय	103-106
15.	जैनदर्शन में पर्यावरण विषयक चिन्तन	डॉ. कुलदीप कुमार	107-111

English Section

16-	OJÂPÂLI, A TRADITIONAL ART FORM OF ASSAM AND ITS RESEM BLANCE WITH THE VEDIC TEXTS	Dr. Jagadish Sarma	112-119
17-	CONCHES AND OTHER GASTROPODS IN ANCIENTINDIAN LITERATURE AND CULTURE	Sh-K.G. Sheshadri	120-152

Scanned with CamScanner

CARE Listed
न, 2020

शोधप्रभा
वर्ष : 45, द्वितीयोऽङ्कः

जैनदर्शन में पर्यावरण विषयक चिन्तन

डॉ. कुलदीप कुमार*

जैनदर्शन भारतवर्ष का एक अत्यन्त प्राचीन एवं महत्त्वपूर्ण दर्शन है। इसे श्रमण, आर्हत्, निर्ग्रन्थ,व्रात्य, दिगम्बर आदि अनेक नामों से जाना जाता रहा है। जैन दर्शन में प्राणिमात्र के कल्याणार्थ अनेक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। यथा- अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकान्तवाद, स्याद्वाद, नयवाद इत्यादि। लेकिन इन सबका एक शब्द में सारांश है- अहिंसा। अहिंसा सम्पूर्ण जैनदर्शन का मूलाधार है, एकमात्र केन्द्र बन्दु है, इसीलिए इस दर्शन को अहिंसा दर्शन भी कहतें हैं।

प्रस्तुत शोधालेख में अहिंसा के माध्यम से किस प्रकार पर्यावरण की रक्षा सम्भव है, इसी विषयपर प्रकाश डालने का प्रयत्न करेगें।

पर्यावरण आज न केवल भारत की अपितु विश्व की विशालतम समस्या बन चुकी है। सम्पूर्ण विश्व के बड़े-बड़े मूर्धन्य मनीषी इससे अत्यन्त चिन्तित हैं और अतिशीघ्र ही कोई ठोस हल ढूँढ़ लेना चाहते हैं। वे इतने अधिक चिन्तित हैं कि यदि पर्यावरण-प्रदूषण की इस समस्या का कोई हल नहीं निकला तो शीघ्र ही पृथ्वी पर जीवन मुश्किल ही नहीं, असंभव हो जाएगा। वर्तमान वैज्ञानिक पर्यावरण-प्रदूषण को मुख्यता तीन प्रकार का बतलातें हैं- जल-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण और ध्वनि-प्रदूषण, किन्तु हम समझते हैं कि उक्त प्रदूषणों में मानसिक प्रदूषण को भी जोड़ा जाना चाहिए, क्योंकि उक्त तीनों प्रकारों में कहीं न कहीं मानसिक प्रदूषण ही मूल कारण सिद्ध होता है, जैसा कि अनेक धार्मिक, आध्यात्मिक और दार्शनिक चिन्तकों का मत भी है। मन की मलिनता अज्ञान एवं राग-द्वेष आदि भावों से निर्मित होती है। अतः यह स्पष्टतया सिद्ध होता है कि उक्त प्रदूषणों के प्रचार-प्रसार में मन की मलिनता की ही अहम् भूमिका सिद्ध होती है। अतः यह सुस्पष्ट है कि राग-द्वेषसंसार के सबसे बड़े प्रदूषण हैं जो अन्यान्यप्रदूषणों का कारण बनते हैं। तथा ये राग-द्वेष ही विश्व के सबसे बड़े शस्त्र भी हैं। सबसे बड़े ही क्या, ये ही असली शस्त्र हैं। यदि ये न हो तो विशाल शस्त्रागार भी किसी का कुछ नहीं बिगाड़ सकता और ये हो तो एक पुस्तक भी शस्त्र बन सकती है। यदि मनुष्य

* आचार्य,
जैनदर्शन विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली-16

Scanned with CamScanner

मई-जून-2020

National Journal of Hindi & Sanskrit Research

National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2020; 1(30): 103-104
© 2020 NJHSR
www.sanskritarticle.com

डॉ. कुलदीप कुमार
सहायकाचार्य, जैनदर्शनविभागः,
श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृत-
विश्वविद्यालय,नवदेहली -११००१६

जैनदर्शन में ज्ञानमीमांसा

डॉ. कुलदीप कुमार

सम्यग्ज्ञान- वस्तुओं के यथार्थ ज्ञान को सम्यग्ज्ञान कहते हैं। सम्यक्दर्शन के पश्चात उत्पन्न होने वाला ज्ञान ही आत्मविकास का कारण होता है। स्व और पर का भेद विज्ञान ही यथार्थ ज्ञान है तथा हेय और उपादेय का विवेक कराना इसका मूल कार्य है।

न केवल भारतीय दर्शनों में अपितु पाश्चात्य दर्शनों में भी ज्ञान के स्वरूप पर अत्यधिक विस्तार एवं गम्भीरतापूर्वक चर्चा उपलब्ध होती है, किन्तु जैनाचार्यों की ज्ञानमीमांसा पर आज भी हर कोई आश्चर्यचकित होता है, जैनाचर्यों ने ज्ञान के स्वरूप, कार्य एवं भेद-प्रभेदों पर इतना सूक्ष्म एवं गूढ चिन्तन प्रस्तुत किया है कि हर कोई आश्चर्यचकित होता है। जैनाचर्यों द्वारा प्रतिपादित ज्ञानमीमांसा को समझने के लिये मुख्य रूप से आचार्य उमास्वामी रचित 'तत्त्वार्थसूत्र' प्रथम अध्याय और इसकी आचार्यपूज्यपादरचित 'सर्वार्थसिध्दि', आचार्य अकलंकविरचित 'तत्त्वार्थवार्तिक' आचार्यविद्यानन्दरचित 'तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक' आदि प्रमुख टीकाएं तथा आचार्यकुन्दकुन्दरचित 'प्रवचनसार' एवं 'विशेषावश्यकभाष्य' आदि ग्रन्थों का विशेष रूप से अवलोकन करना चहिए।

ज्ञान शब्द का अर्थ- "ज्ञानं" शब्द संस्कृत की 'ज्ञा' धातु में ल्युट् प्रत्यय लगाने से निष्पन्न हुआ है, जिसके अर्थ हैं- जानना, समझना, परिचित होना, प्रवीणता, विद्या, शिक्षण, चेतना, संज्ञान, जानकारी, जाने-अनजाने, जानबूझकर, अनजाने में, परम ज्ञान विशेषकर उस धर्म और दर्शन की ऊँची सच्चाईयों पर मनन से उत्पन्न ज्ञान जो मनुष्य को अपनी प्रकृति दया वास्तविकता को जानना तथा जो आत्मसाक्षात्कार या परमात्मा से मिलन की बात सिखलाता है, बुद्धि की आँख, मन की आँख, बौद्धिक स्वपन, बुद्धिमान और विद्वान पुरुष, वास्तविक ज्ञान, ब्रह्मज्ञान, सत्यज्ञान की प्राप्ति रूप तपस्या, गुरू, सरस्वती का विशेषण, निश्चिति, निश्चर्याकरण, आत्मज्ञानी, दार्शनिक, सच्चा आत्मज्ञान प्राप्त करने या परमात्मानुभूति प्राप्त करने का मुख्य साधन, चिन्तन, विचारणा, भविष्य कथन१ का शास्त्र, और प्रत्यक्ष ज्ञान की इन्द्रियादि।'[1]

ज्ञान शब्द की व्युत्पत्ति-

जानाति ज्ञायतेऽनेन ज्ञप्तिमात्रं वा ज्ञानम्।[2]

अर्थात् जो जानता है वह ज्ञान है। जिसके द्वारा जाना जाये सो ज्ञान है। जानना मात्र ज्ञान है।

ज्ञान के लक्षण-

Correspondence:
डॉ. कुलदीप कुमार
सहायकाचार्य, जैनदर्शनविभागः,
श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृत-
विश्वविद्यालय,नवदेहली -११००१६

Scanned with CamScanner

त्रैमासिकी

ISSN 2278-0416

हरिप्रभा

अन्ताराष्ट्रिया मूल्याङ्किता त्रैमासिकी शोधपत्रिका

An International Refereed Quarterly Research Journal

वर्षम् : १७, अंङ्क : ०७-१२, जुलाई - दिसम्बर - २०२०

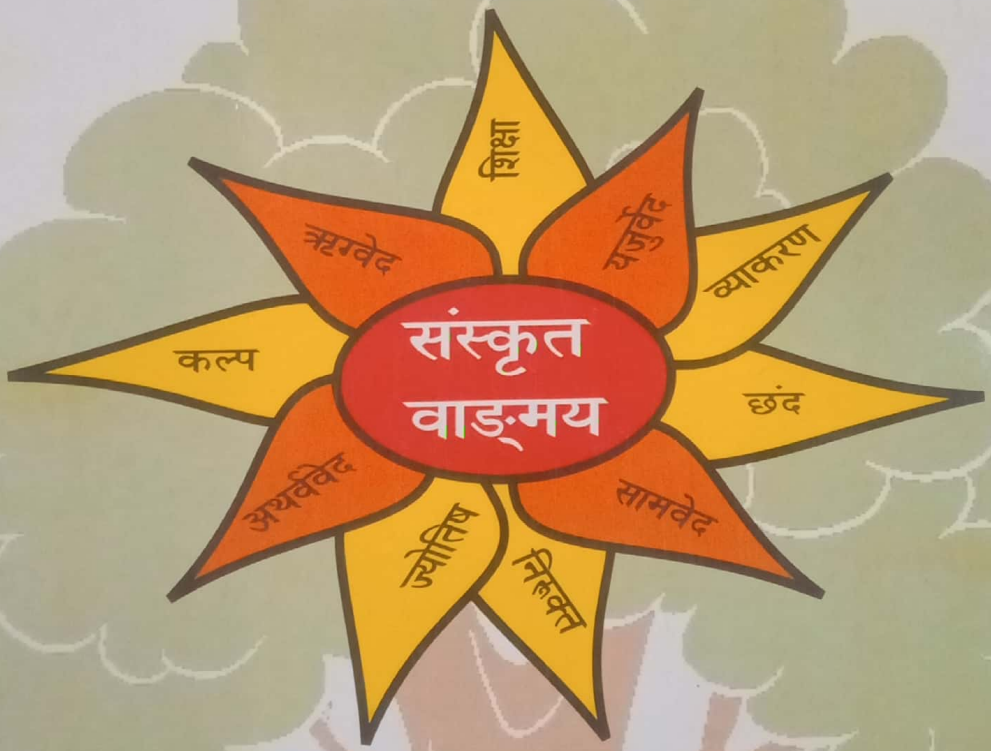

हरित्वता वर्चसा सूर्यस्य श्रेष्ठै रूपैस्तन्वं स्पर्शयस्व।
अस्माभिरिन्द्र सखिभिर्हुवानः सध्रीचीनो मादयस्वा निषद्य॥
(ऋक् १०/११२/३)

हरियाणा संस्कृत अकादमी, पंचकूला

Scanned with CamScanner

१३. काव्यलक्षणसमीक्षणम्	श्री कपिलदेवभट्टः	९६
१४. मानमेयोदये निरूपितानां गुणानां विमर्शः	विनोदकुमारः	१०२
१५. भाषाविज्ञानदृष्ट्या पूर्णविरामादिचिह्नप्रयोग-विमर्शः	डॉ. चेमटे सुरेशः	१०७
१६. सेम्युअल-टेलर-कॉलरिजप्रतिपादितानां काव्यशास्त्रीयसिद्धान्तानां विमर्शः	प्रो सुमनकुमारझा	११५
१७. जैनदर्शने प्रमेयविमर्शः	डॉ. कुलदीपकुमारः	१२३
१८. ब्रह्मचारि प्रशस्तिः	डॉ. जगदीशप्रसादः शर्मा	१२७
१९. पर्यावरणसंरक्षणम्	श्री रविन्द्रकौशिकः	१२९
२०. 'कोरोना'रोगः कः, निवारणं चास्य कथम्?	डॉ. रामेश्वरप्रसादगुप्तः	१३१
२१. हरियाणासंस्कृत-अकादम्याः-गतिविधयः	डॉ. प्रतिभा वर्मा	१३८

*****

Scanned with CamScanner

जैनदर्शने प्रमेयविमर्शः

*डॉ. कुलदीपकुमारः

जैनाचार्यैः विवक्षावशात् प्रमेयः चतुर्विधोऽपि इति विभाजितम्। द्रव्यापेक्षया षड्द्रव्याणि, क्षेत्रापेक्षया पञ्चास्तिकायानां, कालापेक्षया नवपदार्थानाञ्च विवेचनं क्रियते। भावापेक्षया च सप्ततत्त्वानि प्रमेयभूतानि प्रचक्षितानि।

जैनाचार्यैः प्रमाणस्य लक्षणं प्रतिपादितम् 'सम्यग्ज्ञानं प्रमाणम्।' तथा मोक्षमार्ग-विषये जैनाचार्यैः कथितम् 'साम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः।' अत्र जिज्ञासा उदेति यत् मोक्षः तु प्रमेयमेव मोक्षस्य च प्रमेयत्वात् तथा तत्र ज्ञानमपि प्रमेयं प्रमाणस्य प्रमेयत्वात्। कीदृशं ज्ञानं मोक्षस्य प्रमाणस्य वा साधनं भवति? अत्र ज्ञानप्रमेयस्य जैनग्रन्थेषु प्रमाणमिव प्रमेयस्यापि व्यवस्थितं विवेचनमुपलभ्यते। तत्र प्रमेयस्य वर्णनं मुख्यतया न्यायविषयकग्रन्थेषु प्राप्यते। जैनन्यायशास्त्रेषु 'प्रमाणनयात्मको न्यायः' इति प्रतिपादनावसरे प्रमाणस्य साङ्गोपाङ्गं विवेचनं दरीदृश्यते। जैननये प्रमेयस्य लक्षणमस्ति- प्रमाणविषयः प्रमेयः अर्थात् यत् किमपि प्रमाणेन ज्ञायते तत् सर्वं प्रमेयपदवाच्यम् भवति। यथा-

१. प्रमाणविषयः प्रमेयम्।[१]

२. योऽर्थः प्रयीयते तत्प्रमेयम्।[२]

३. द्रव्यपर्यायात्मकं वस्तु प्रमेयम् इति तु समीचीनं लक्षणं सर्वसंग्राहकत्वात्।[३]

जैनशास्त्रेषु प्रमेयस्य विविधदृष्ट्या अनेके भेदाः वर्णिताः सन्ति। यथा-

प्रमेयः द्विविधोऽस्ति- जीवाजीवभेदेन, स्वपरभेदेन, हेयोपादेयभेदेन वा।

प्रमेयः त्रिविधोऽस्ति- शब्दार्थज्ञानभेदेन, द्रव्यगुणपर्यायभेदेन, हेयज्ञेयोपादेयभेदेन वा।

प्रमेयः चतुर्विधोऽस्ति- नामप्रमेयः, स्थापनाप्रमेयः, द्रव्यप्रमेयः, भावप्रमेयश्चेति।

एवम्प्रकारेण अन्येऽपि संख्यातासंख्यातानन्तभेदाः भवितुमर्हन्ति। भवतु, किन्तु अस्य प्रमाणविषयस्य प्रमेयस्य स्वरूपन्तु इदमेवास्ति-

सामान्यविशेषात्मा तदर्थो विषयः।[४]

अर्थात् प्रत्येकं वस्तु सामान्यविशेषात्मकमेवास्ति। तदेव प्रमाणस्य विषयः भवति। एकान्तेन सामान्यरूपः विशेषरूपः वा वस्तु न भवति तस्मात् प्रमेयोऽपि न भवति। प्रमेयः तु अनेकान्तात्मकः एव भवति- एतदेव जैनदर्शनस्य वैशिष्ट्म्।

---

* *सहायकाचार्यः (जैनदर्शन विभाग) श्रीलालबहादुरशास्त्री राष्ट्रियसंस्कृत विद्यापीठम् कटवारिया सराय, नव देहली- १६, मो.नं. - ९५६०२५०११७*

Scanned with CamScanner

UGC - CARE LISTED

ISSN [illegible]

अनुसन्धान-प्रकाशन-विभागीया त्रैमासिकी शोध-पत्रिका

शोध-प्रभा

(A Refereed & Peer-Reviewed Quarterly Research Journal)

46 वर्षे प्रथमोऽङ्कः (जनवरीमासाङ्कः) 2021

प्रधानसम्पादकः
प्रो.मुरलीमनोहरपाठकः
कुलपतिः

सम्पादकः
प्रो.शिवशङ्करमिश्रः

सहसम्पादकः
डॉ.ज्ञानधरपाठकः

श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः
केन्द्रीयविश्वविद्यालयः
नवदेहली-16

Scanned with CamScanner

विषयानुक्रमणिका

संस्कृतविभागः

1.	यदागमेत्यादिपरिभाषार्थविमर्शः	प्रो. रामनारायणद्विवेदी	1-6
2.	वेदेषु दैवीयापदस्तन्निरोधोपायाश्च	विद्यावाचस्पतिः डॉ. सुन्दरनारायणझा	7-13
3.	प्रातिशाख्यपाणिनीयव्याकरणयोर्दृष्ट्या स्वरितस्वरविमर्शः	डॉ. सूर्यमणिभण्डारी	14-23
4.	लोकमान्यालङ्कारस्य परिचयः	डा. रत्नमोहनझाः	24-35
5.	पुराणलक्षणसन्दर्भे श्रीमद्भागवतस्य दशलक्षणानि ग्रन्थस्वरूपे तेषां सङ्गतिश्च	डॉ. नीरजनौटियालः	36-48
6.	भोजराजसम्मतशृङ्गार-रसावियोगसंकल्पनयोः विश्लेषणम्	डॉ.गोपालकुमारझा	49-55
7.	जैनदर्शने प्रमाणविचारः	प्रो. कुलदीपकुमार	56-62

Scanned with CamScanner

ARE Listed
र्च, 2021

शोधप्रभा
वर्ष : 46, प्रथमोऽङ्कः

जैनदर्शने प्रमाणविचारः

प्रो. कुलदीपकुमारः*

नयप्रमाणयोराधारेण जैनन्यायः सुस्थितोऽस्ति। यथोच्यते - **'नयप्रमाणात्मको न्यायः'**[1]। सर्वेषु दर्शनेषु प्रमाणानां विवेचनं न्यायान्तर्गतत्वेन उपलभ्यते। किन्तु जैनन्यायस्य इयं विशेषता यत् प्रमाणविवेचनेन सह नयस्यापि विवेचनं जैनन्याये एव समुपलभ्यते इति। न्यायशास्त्रस्य प्रमुखः विषयः प्रमाणविवेचनमित्यत्र सर्वेषां दार्शनिकानां नास्ति मतभेदः। जैनदर्शनेऽपि प्रमाणविवेचकाः शताधिकाः ग्रन्थाः उपलब्धाः सन्ति।

प्रकृते शोधालेखे जैनन्यायान्तर्गतस्य प्रमाणविवेचनस्य निम्नलिखितविषयाणां प्रतिपादने कश्चन प्रयासः विहितोऽस्ति। यथा-

1. प्रमाणलक्षणम्।
2. प्रमाणभेदाः।
3. प्रमाणविषयाः।
4. प्रमाणफलम्।
5. प्रमाणाभासः।

1. प्रमाणलक्षणम्

प्रमाणं दार्शनिकजगतो महत्त्वपूर्णविषयोऽस्ति। मानवः सर्वदा ज्ञानप्राप्त्यर्थं यतते। ज्ञानप्राप्तेर्यत्साधनं तत्प्रमाणमिति सर्वेषां दार्शनिकानामैकमत्यम्। तत्रापि यथार्थानुभवसाधनमेव प्रमाणम्।

न्यायदर्शनमते ज्ञानस्य करणमिन्द्रियार्थसन्निकर्षः। तस्मात् तन्मते इन्द्रियसन्निकर्ष एव प्रमाणम्। मीमांसका ज्ञातृव्यापारमेव प्रमाणं स्वीकुर्वन्ति। यतः तेनैव हि पदार्थानां ज्ञानं भवति। सांख्यदर्शने इन्द्रियवृत्तिरेव प्रमाणं मन्यन्ते। बौद्धाः निर्विकल्पकप्रत्यक्षज्ञानं प्रमाणं स्वीकुर्वन्ति। जरन्नैयायिकजयन्तभट्टाः कारकसाफल्यमेव प्रमाणं मन्यन्ते। चार्वाकाः केवलं

---

* आचार्यः (जैनदर्शनविभागः), श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः, (केन्द्रीय विश्वविद्यालयः) कुतुबसंस्थानिकक्षेत्रम्, नवदेहली-16, Mo. : 9560250117

1. आचार्यः लघु-अनन्तवीर्यः, प्रमेयरत्नमाला, टिप्पण-2

Scanned with CamScanner

Volume - XVIII Jan-June 2021 ISSN 2320-2025

व्यासश्रीः

VYASAŚRIH

A Bilingual Refereed Research Journal of Indology

(UGC CARE LISTED)

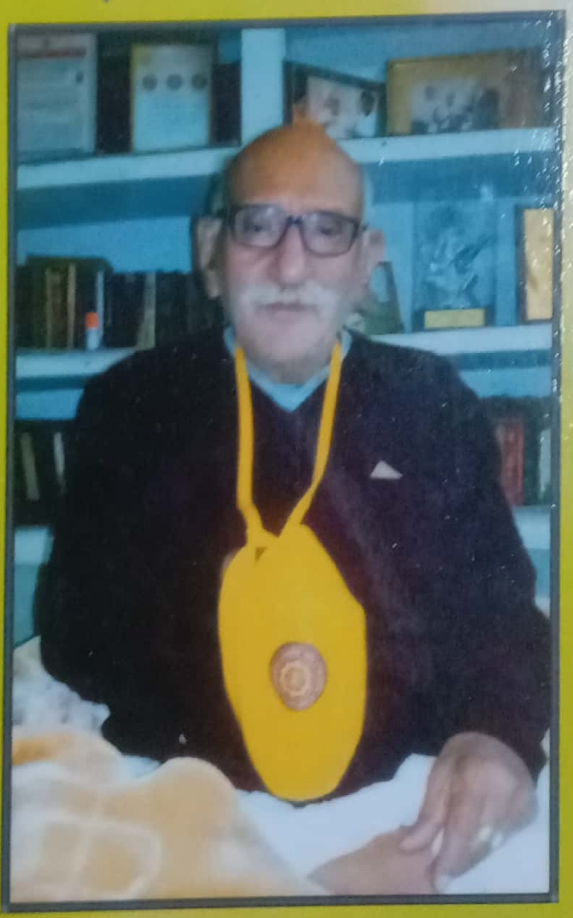

Padmashree Professor Ramayatna Sukla felicitation volume

: Chief Editor :

Dr. Buddheswar Sarangi

Publisher

Maharshi Vyasadev National Research Institute

Vedavyas, Rourkela-4, Odisha

email : vyasasri12@gmail.com

vist us : www.vyasasri.com

Scanned with CamScanner

सृष्टिः	स्रष्टा	पृष्ठम्
१८. राजनीतिः, तथा आधुनिककवीनां दृष्टिः	ड. मिठु रानी मइश	168
१९. भक्तिरसविवेकः	डॉ. शशिकान्तः द्विवेदी	176
२०. विचारव्यवस्थायां धर्मशास्त्रस्य प्रभावः	ड. स्वपनः माझिः	194
२१. धर्मशास्त्रे कौटुम्बिकं मूल्यम्	ड. सुरजितः व्यानार्जी	199
२२. श्रीमद्भागवतमहापुराणे धार्मिकजीवनदर्शनम्	डॉ. आशा सिंह रावत	212
२३. स्थानीय इतिहास लेखन में मौखिक स्रोत	डॉ. राजकुमार	221
२४. चतुर्दशसूत्राणां वैशिष्ट्यम्	डॉ. सुधाकरः मिश्रः	231
२५. नामीति सूत्रे अङ्गाधिकारप्रयोजनम्	डॉ. सौमित्रः आचार्यः	237
२६. तर्कभाषादिशा संशयस्वरूपम्	डॉ. कलदीपः कमारः	248
२७. भागवतदशमस्कन्धे श्रीधरस्वामिकृतभावार्थदीपिकायाः समीक्षणम्	डॉ. काजल पात्र	255
२८. Inscriptional Poet Umapatidhara	Dr. Partha Sarathi Mukhopadhyay	262
२९. वैदिकसाहित्येषु प्रकृतिः	डॉ. दिलीपः पण्डा	266
३०. वेदाङ्गेषु छन्दसां प्रामुख्यम्	डॉ. श्वेतपद्मा शतपथी	271
३१. उत्तरमेघे कालिदासस्य पर्यावरणचेतना	डॉ. लक्ष्मीकान्तषडङ्गी	277
३२. निपातनसिद्ध-यत्-प्रत्ययान्तपदविमर्शः	डॉ. सुनेली देइ	283
३३. पत्रप्रियाकाव्यसम्पदः	डॉ. सोमनाथः दाशः	291
३४. साधुभद्रेशदासकृतसत्सङ्गदीक्षा	डॉ. ज्ञानरञ्जनः पण्डा	297

Scanned with CamScanner

तर्कभाषादिशा संशयस्वरूपम्

डॉ. कुलदीपकुमारः

अस्माकं भारतीयदर्शनपरम्परायां तर्कविद्यायाः महत्त्वपूर्णं स्थानमस्ति। यतो हि जीवस्य दुःखानां मूलकारणम् एकमेव वर्तते-अज्ञानं, मिथ्याज्ञानम्, अतः दुःखनिवृत्याः मूलकारणमपि एकमेव-ज्ञानं, सम्यग्ज्ञानम्। तथा इदं सम्यग्ज्ञानम् अथवा तत्त्वस्य समीचीनं ज्ञानं न्यायेन अथवा तर्केण एव सम्भति। अन्यत् किमपि साधनं नास्ति येन तत्त्वस्य समीचीनं ज्ञानं सम्भवेत्।

तर्कभाषाशब्दस्य व्युत्पत्तिः -

महर्षिणा गौतमेन स्वकीये ग्रन्थे षोडशपदार्थेषु तर्क' नामाख्योऽप्येकः पदार्थः स्वीकृतस्तस्य लक्षणञ्च कृतम् 'अविज्ञाततत्त्वेऽर्थे कारणोपपत्तिस्तत्त्वज्ञानार्थमूहस्तर्कः'। भावोऽयं यत् कारणानां युक्तीनाञ्च ऊहोऽर्थाद्नुसन्धाननामकस्तर्कः। परन्तु न्यायतर्कभाषायाः टीकाकृद्भिः विद्वद्भिः 'तर्क्यन्ते प्रतिपाद्यन्ते इति तर्काः प्रमाणादयष्षोडशपदार्थास्ते भाष्यन्तेऽनया इति तर्कभाषा"[१] इति तर्कभाषाशब्दस्य व्युत्पत्तिर्निर्धारिता।

संशयशब्दस्य अर्थ : -

संशयः 'सम् शी अच्' प्रत्ययेन निष्पन्नमस्ति। यस्य अनेके अर्थाः सन्तिः यथा-सन्देहः, अनिश्चितः, चपलता, सङ्कोचः, शङ्का, अनिर्णयः, भयम्, सम्भावना, अनिश्चयः, अस्थिरता इत्यादयः।

तर्कविद्यायाः पर्यायवाचिनः विभिन्नेषु शास्त्रेषु तर्कविद्यायः कृते

---

१. न्यायसूत्रम् (१/१/४०)
२. कौटिल्यः, अर्थशास्त्रम्, विद्योद्देशप्रकरणम्
३. नयचक्रम्, माइलधवलः, २६१
४. धवला (१/१/१/१०)

Scanned with CamScanner

Volume - XX (Part-II) July-December 2021 ISSN 2320-2025

व्यासश्रीः

VYĀSAŚRĪḤ

A Bilingual Refereed Research Journal of Indology

(UGC CARE LISTED)

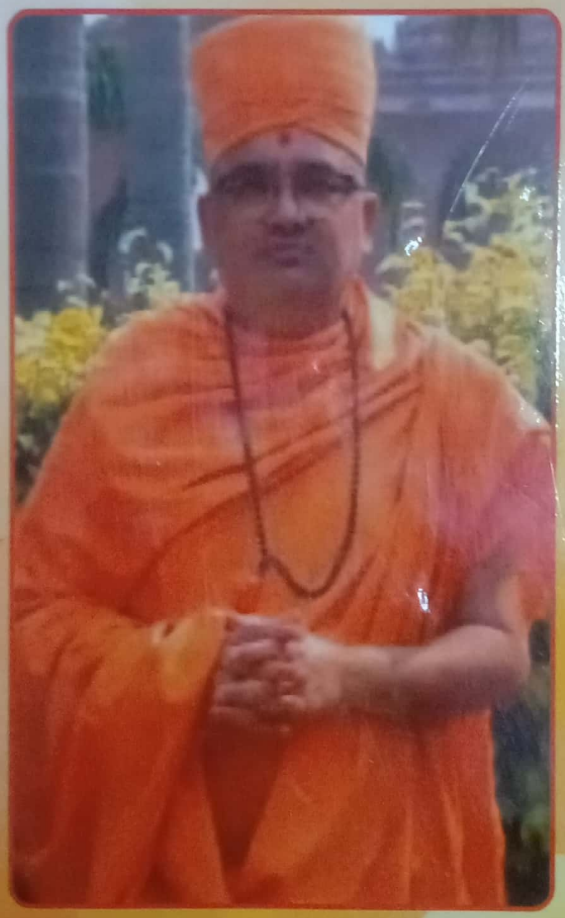

Mahamahopadhyaya Swami Bhadresh Das Maharaj

: Chief Editor :

Dr. Buddheswar Sarangi

Publisher

Maharshi Vyasadev National Research Institute

Vedavyas, Rourkela-4, Odisha

email : vyasasri12@gmail.com

vist us : www.vyasasri.com

Scanned with CamScanner

सृष्टिः	स्रष्टा	पृष्ठम्
३४. काव्यशास्त्रग्रन्थेषु रसविवेकः	डॉ. कृष्णकुमारकुमावतः	300
३५. शब्दार्थसम्बन्धस्य स्वरूपं नित्यत्वञ्च	डॉ. सुदीप मण्डलः	310
३६. शिशुपालवधे दार्शनिकतत्त्वानां विवेचनम्	डॉ. कलदीप कुमार	323
३७. Shri Aurobindo And Idea of Divintty	Dr. Chirashree Mukherjee	329
३८. अक्षरतत्त्वे जीवविज्ञानम्	डॉ. बुद्धेश्वरषडङ्गी	335
३९. The Excellence of Listening to and Chanting The Srimadbhagavatapuranam	Dr. Jewti Boruah	339
४०. भागवतधर्मस्येतिहासचर्चायां द्वितीयचन्द्रगुप्तस्य 'चक्रविक्रम' इति मुद्रायाः गुरुत्वम्	डॉ. सुस्मिता गोस्वामी	345
41. ''वाक्यपदीयस्य साधनसमुद्रेशदिशा कर्मत्वविमृष्टिः''	डॉ. सौम्यजित् सेनः	358
42. Ways of Absolute Knowledge in Jnana-Karma-Sannyasa Yoga of Srimad Bhagavad Gita	Dr. Santosh Kumar Behera	366
43. आदिवासी कविता का आत्म पक्ष	डॉ. सन्तोष गिरहे	377
44. चातुर्मास्यप्रयोग इति हस्तलिखितग्रन्थस्य कानिचित् वैशिष्ट्यानि	नव कुमार दाशः	385
45. जैननयेऽवधिज्ञानसमीक्षणम्	श्रीशशांकशेखर पात्रः	396
46. पुराणेषु शैक्षिकमूल्यानि	डॉ. ए. शेखर रेड्डी	401
47. भारतीयसंस्कृतौ नारीणां गौरवम्	डॉ. काजल माल	407
48. मणिभद्रपुरी : पौराणिकं रिक्थम्	डॉ. शैलेशकुमार मिश्रः	414
49. शिशुपालवधे महाकाव्ये महाकवेर्माघस्य प्रतिभासिता दार्शनिकी प्रज्ञा	डॉ. देवसुजन मुखार्जी	421

Scanned with CamScanner

शिशुपालवधे दार्शनिकतत्त्वानां विवेचनम्

प्रो० कुलदीप कुमार

संस्कृतकाव्यमंदाकिनी अस्माकं सर्वेषां सहृदयानां हृदयानि पवित्रीकरोति। मयी माधुर्यगुणोपेता एषा सर्वेषां संस्कृतानुरागिणां मनसि हर्षमुत्पादयन्ति। वाङ्मये बहुभिः कविभिः मनीषिभिः निजकाव्यरचनां कृत्वा अस्या अजस्रप्रवाहे योगदानं कृतम्। अस्माकं भारतभूमौ कालिदास-माघ-भारवि-दण्डिप्रभृतयः महाकवयः समये-समये समुद्भूताः। तेषु महाकविषु 'शिशुपालवधम्' नामकस्य महाकाव्यस्य रचियता विराजन्ते माघमहाकवयः। संस्कृतसाहित्येगगने महाकविमाघस्य अतीव महत्त्वपूर्णं स्थानं वर्तते। कवेः माघस्य गौरवाधायकं ग्रन्थरत्नं शिशुपालवधनामकमेकमेव समुपलभ्यते। महाकाव्ये अस्मिन् विंशतिः सर्गाः, पञ्चचत्वारिंशदुत्तरषट्शताधिक एकसहस्रं श्लोकाश्च विद्यन्ते। कालिदासस्य कृतिषु उपमानां प्राधान्यं वर्तते। भारवेः किरातार्जुनीये अर्थगौरवस्य वैशिष्ट्यमस्ति। दण्डिनः दशकुमारचरिते पदलालित्यं प्रतिभाति तत् सर्वं माघस्य शिशुपालवधे वर्तते। अत एव सानन्दमुद्घोष्यते यत्-

उपमा कालिदासस्य, भारवेरर्थगौरवम्।

दण्डिनः पदलालित्यं माघु सन्ति त्रयो गुणाः।।

ग्रन्थेऽस्मिन् साहित्यिकतत्त्वैः सह दार्शनिकतत्त्वानां प्राचुर्यमप्यवलोक्यते। सर्वप्रथमं वयमत्र 'दर्शनम्' इत्यस्य शब्दस्य अर्थमवगन्तुं प्रयत्नं कुर्मः। तदनन्तरं शिशुपालवधे वर्णितानां दार्शनिकतत्त्वानां चर्चां कुर्मः।

प्रेक्षणार्थकाद् दृश् धातोः (दृशिर् प्रेक्षणे) ल्युट्-प्रत्यये कृते दर्शनशब्दो निष्पद्यते। संस्कृतभाषायाम् अयं शब्दः दर्शनं नपुंसकलिङ्गे विराजते। सर्वप्रथमं प्रश्नोऽयं समुद्भवति यत् किं नाम दर्शनम्? अस्य व्युत्पत्तिलभ्यार्थोऽस्ति- 'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्।' 'दृश्यतेऽनेने परम तत्त्वमिति दर्शनम्।' दर्शनं सामान्यावबोधलक्षणम्। अस्य शब्दस्य व्युत्पत्तिदृष्ट्या अर्थदृष्ट्या च स्पष्टरूपेण कथयितुं शक्यते यत् येन माध्यमेन साधनेन वा इदं विश्वं, इदं वस्तुजातम्, ब्रह्म, जीवात्मा, परमात्मा, अन्तरात्मा, प्रकृतिश्च याथातथ्येन दृश्यन्ते, निरीक्ष्यन्ते, समीक्ष्यन्ते विविच्यन्ते च तद् दर्शनम्। अतः वयमत्र

Scanned with CamScanner

स्थापित जुलाई 1988

ISSN No. 0971-796X

प्राकृतविद्या

वर्ष 34, अंक 4

अक्तूबर-दिसम्बर 2021 ई.

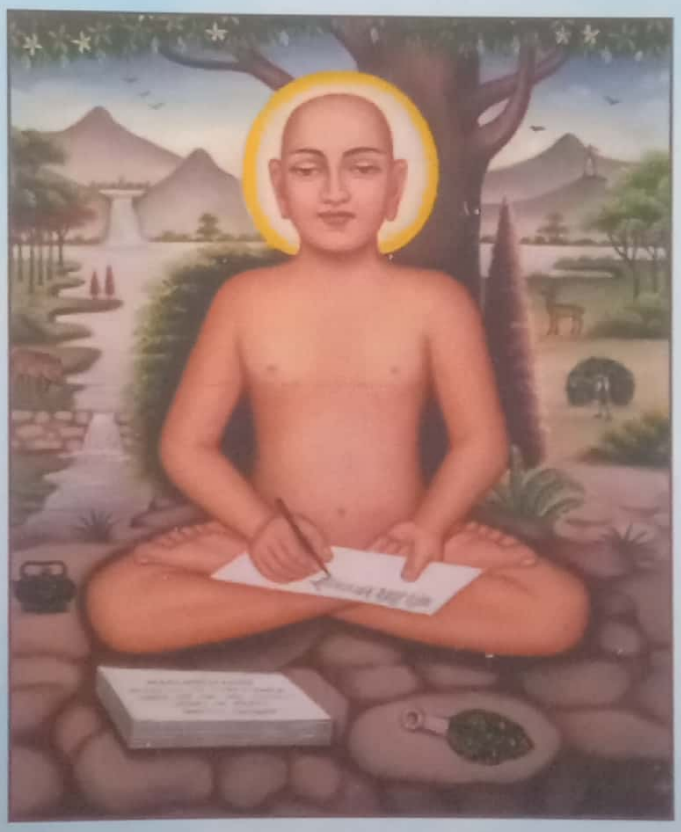

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुंदकुंदाद्यो, जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्॥

Scanned with CamScanner

अनुक्रम

क्र.सं.	शीर्षक	लेखक	पृ.सं.
1.	मंगलाचरण : मोक्षमार्ग में भक्ति का स्थान	आचार्य शिवकोटि	3
2.	सम्पादकीय : जैन ग्रन्थों में मंगल-विमर्श	प्रो. (डॉ.) वीरसागर जैन	5
3.	स्वस्थ जीवन कैसे बितायें?	आचार्य विद्यानन्द मुनिराज	13
4.	जैन योग में गुप्ति	आचार्य श्रुतसागर मुनिराज	19
5.	मध्यकालीन राजस्थान में जैन धर्म का मूल्यांकन एवं योगदान	डॉ. मो. मंजर अली	31
6.	णाणसारो	प्रो (डॉ.) अनेकांत कुमार जैन	38
7.	प्राकृत-साहित्य में निमित्त-उपादान व्यवस्था	डॉ. अनिल कुमार जैन	41
8.	प्राकृत के समकालीन रचनाकार	डॉ. आशीष कुमार जैन	49
9.	जैनाचार्यों की दृष्टि में चेतना का स्वरूप	डॉ. कुलदीप कुमार	60
10.	भरत चक्रवर्ती और आदर्श राज्यशासन	डॉ. समणी संगीतप्रज्ञा	64
11.	ब्रह्म जिनदास कृत 'जीवन्धर रास' में बारह भावनाएँ	डॉ. प्रेमचन्द्र रांवका	71
12.	तारण स्वामी और उनका अवदान	अंकुर जैन	74
13.	प्राकृत-साहित्य में नारी	अलीशा जैन	82
14.	अनेकांत : पाँच मुक्तक	डॉ. दिलीप धींग	88
15.	प्राकृत-विद्या और आचार्य विद्यानन्द मुनिराज	योगेन्द्र दिवाकर	89
16.	समाचार-दर्शन		91

जैन धर्म में योग और कायोत्सर्ग

'मोहनजोदारो से उपलब्ध ध्यानस्थ योगियों की मूर्तियों की प्राप्ति से जैनधर्म की प्राचीनता निर्विवाद सिद्ध होती है।'

—वाचस्पति गैरोला, भारतीय दर्शन, पृष्ठ 86

'मोहनजोदारो की खुदाई में योग के प्रमाण मिले हैं। आदि तीर्थंकर ऋषभदेव के साथ योग और वैराग्य की परम्परा उसी प्रकार लिपटी हुई है, जैसे वह शिव के साथ है।'

—रामधारीसिंह 'दिनकर', संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ 39

'सिंधु घाटी की अनेक मुद्राओं में अंकित न केवल बैठी हुई देवमूर्तियाँ योगमुद्रा में हैं और उस सुदूर अतीत में सिंधु घाटी में योगमार्ग के प्रचार को सिद्ध करती हैं बल्कि खड्गासन देवमूर्तियाँ भी योग की कायोत्सर्ग मुद्रा में हैं और ये कायोत्सर्ग ध्यानमुद्रा विशिष्टतया जैन हैं।'

—श्री रामप्रसाद चंदा, मॉडर्न रिव्यू, अगस्त 1932, कलकत्ता

Scanned with CamScanner

ाचार्यों की दृष्टि में चेतना का स्वरूप

—डॉ. कुलदीप कुमार*

'चेतना' शब्द दर्शन-जगत् का एक महत्त्वपूर्ण शब्द है, तथा यह कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि सम्पूर्ण सृष्टि का मूलाधार चेतना ही है, जिसे वर्तमान वैज्ञानिक भी मुक्तकंठ से स्वीकार करते हैं। उनकी भाषा में चेतना का नाम consciousness है। इसमें जीव के अस्तित्व की सिद्धि भी हो जाती है, क्योंकि अगर चेतना है तो कोई न कोई उसका स्वामी भी है और वह स्वामी जीव अथवा आत्मा के अतिरिक्त और कोई नहीं हो सकता। भले ही वर्तमान वैज्ञानिक इस तथ्य को न स्वीकारते हों।

चेतना शब्द का अर्थ– चेतना शब्द संस्कृत की 'चित्' धातु में 'ल्युट्-टाप्' प्रत्यय से निष्पन्न हुआ है, जिसके अनेक अर्थ हैं– सजीव, जीवित, जीवधारी, अचेत, संवेदनशील, दृश्यमान, सचेत प्राणी, मनुष्य, आत्मा, मन, परमात्मा, ज्ञान, संज्ञा, प्रतिबोध, समझ, विचारविमर्श इत्यादि।[1]

चेतना का लक्षण– जैनाचार्यों के अनुसार निजसंवेदनगम्य अन्तरंग प्रकाशस्वरूप भाव विशेष को चेतना कहते हैं। यथा– जीवस्वभावश्चेतना। यत्संनिधानादात्मा ज्ञाता दृष्टा कर्ता भोक्ता च भवति तल्लक्षणो जीवः। अर्थात् जिस शक्ति के सान्निध्य से आत्मा ज्ञाता, दृष्टा अथवा कर्ता भोक्ता होता है वह चेतना है और वही जीव का स्वभाव होने से उसका लक्षण है।[2]

'चेतना तावत्प्रतिभासरूपः सा तु तेषामेव वस्तूनां सामान्यविशेषात्मकत्वात् द्वैरूप्यं नातिक्रामति। ये तु तस्या द्वे रूपे ते दर्शनज्ञाने।'

अर्थात् चेतना प्रतिभास रूप होती है। वह चेतना द्विरूपता का उल्लंघन नहीं करती, क्योंकि समस्त वस्तुएँ सामान्यविशेषात्मक हैं। उसके जो दो रूप हैं वे 'दर्शन' और 'ज्ञान' हैं।[3]

'चेतनानुभूत्युपलब्धिवेदनानामेकार्थत्वात्।' चेतना, अनुभूति, उपलब्धि, वेदना– इन

---

*अध्यक्ष, जैनदर्शन विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, मो. 9560250117

UGC CARE LISTED

ISSN 2278-0416

हरिप्रभा

अन्ताराष्ट्रिया मूल्याङ्किता त्रैमासिकी शोधपत्रिका

PEER REVIEWED, REFEREED, OPEN ACCESS, INDEXED
INTERNATIONAL QUARTERLY RESEARCH JOURNAL (UGC CARE LISTED)

वर्षम् : १९, अंङ्क : ०१-०३, जनवरी - मार्च - २०२२

हरित्वता वर्चसा सूर्यस्य श्रेष्ठै रूपैस्तन्वं स्पर्शयस्व।
अस्माभिरिन्द्र सखिभिर्हुवानः सध्रीचीनो मादयस्वा निषद्य॥

(ऋक् १०/११२/९)

हरियाणा - संस्कृत - अकादमी, पंचकूला

Scanned with CamScanner

१२. धर्मसूत्राणां प्रकाशे कालनिर्णयः	डॉ. सारुलतिवारी	८४
१३. देवर्षिकलानाथशास्त्रिप्रणीताख्यान-वल्लरीकथासङ्ग्रहे लोकनीतिविमर्शः	सौम्या	९१
१४. भारतीयदर्शनेषु विविधसमस्यानां निदानम्	डॉ. नरेन्द्रकुमारः	९९
१५ वैयाकरणाभिमते लक्षणाविमर्शः	डॉ. विजयकुमारपयासी	१०५
१६ विश्वसमुद्भवे व्याकरणदिशा शब्दस्य-कारणत्वम्	डॉ. यीशनारायणो द्विवेदी	१११
१७ आयुर्विज्ञानक्षेत्रे पाल्यां रचितस्य 'भेसज्जमञ्जूसा'-ग्रन्थस्य स्थानं महत्त्वं च	डॉ. प्रफुल्लगडपालः	११५
१८ अर्हद्दर्शने सम्यग्ज्ञानविवेचनम्	प्रो. कुलदीपकुमारः	१२१

*****

Scanned with CamScanner

: CARE Listed ISSN 2278-0416

अर्हद्दर्शने सम्यग्ज्ञानविवेचनम्

*प्रो. कुलदीपकुमारः

भवबीजाङ्कुरजनना रागाद्या क्षयमुपगताः यस्य।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरो जिनो वा नमस्तस्मै॥[१]

भूमिका-

भारतीयवाङ्मये जैनदर्शनं एकं प्राचीनदर्शनं विद्यते अस्य दर्शनस्य अनेकानि पुरातनानि नामानि राजन्ते। यथा- अर्हद्दर्शनं, निर्ग्रन्थदर्शनं, अहिंसादर्शनं, स्याद्वाददर्शनं, अनेकान्तदर्शनं चेत्यादीनि।

येन प्रकारेण विभिन्नदर्शनानां प्रवर्तकाः ऋषिमहर्षयः अभवन्, तेन प्रकारेण जैनदर्शनस्य प्रर्वतकः कोऽपि व्यक्तिविशेषः नास्ति। जैनशब्दः 'जिन' शब्दात् निष्पन्नोऽस्ति। जिनशब्दश्च संस्कृतभाषायाः 'जि' धातो 'नक्' प्रत्यये सति निष्पन्नः। जिनशब्दस्यार्थो वर्तते यो जनः **'अनेकभवगहनविषयव्यसनप्रापणहेतून् कर्मारातीन् जयतीति जिनः।'**[२]

एतादृशैः जिनै उपदिष्टदर्शनं जैनदर्शनमिति उच्यते। प्रत्येकं युगे चतुर्विंशतितीर्थङ्कराः भवन्ति, तथा ते अनादिकालात् प्रचलत् धर्मदर्शनञ्च प्रतिपादयन्ति। वर्तमानयुगे ऋषभदेवादारभ्य महावीरपर्यन्तं चतुर्विंशतितीर्थङ्करैः जैनधर्मदर्शनयोः सिद्धान्तः प्रतिपादितः।

तदन्तरं अनेके जैनदर्शनमर्मज्ञाः आचार्या अभवन्। तेषाम् आचार्याणां न केवलं जैनदर्शने अपितु सम्पूर्णभारतीयवाङ्मये महत्त्वपूर्णं स्थान विद्यते। सामाजिक-आर्थिक-नैतिक-पारमार्थिक-तात्त्विक-वैचारिक-सैद्धान्तिक-ज्ञानविज्ञानादिविषय-चिन्तनदृष्ट्या तेषां सर्वेषु क्षेत्रेषु विशिष्टस्थानं विद्यत एव। तत्र च यथा आचार्यैः ज्ञानविज्ञानधारायाः मार्मिकचिन्तनं कृतं तथैव आचार्यैः पदार्थतत्त्वखगोलसाहित्यकर्मसिद्धान्तात्मतत्त्वादि विषयाणां दार्शनिकदृष्ट्या वैज्ञानिकदृष्ट्या च शोध पूर्णं चिन्तनं विश्लेषणं च कृतम्।

प्रेक्षणार्थकाद् दृश् धातो (दृशिर प्रेक्षणे) ल्युट्-प्रत्यये कृते दर्शनशब्दो निष्पद्यते। संस्कृतभाषायाम् अयं शब्दः दर्शनं नपुसंकलिङ्गे विराजते। सर्वप्रथमं प्रश्नोऽयं उद्भवति यत् किं नाम दर्शनम्? अस्य व्युत्पत्तिलभ्यार्थोऽस्ति-**दृश्यते अनेन इति दर्शनम्।** दर्शनशब्दस्य राष्ट्रभाषायाम् अनेके अर्थाः सन्ति। यथा- देखना, दर्शन करना, निरीक्षण करना, जानना, समझना, प्रत्यक्ष जानना,

* आचार्यः, जैनदर्शनविभागः, श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयम्, नव देहली-१६, दूरभाषः- ९५६०२५०११७, email- kuldeepkaushik30@gmail.com

Scanned with CamScanner

स्थापित जुलाई 1988

ISSN No. 0971-796X

प्राकृतविद्या

वर्ष 35, अंक 2

अप्रैल-जून 2022 ई.

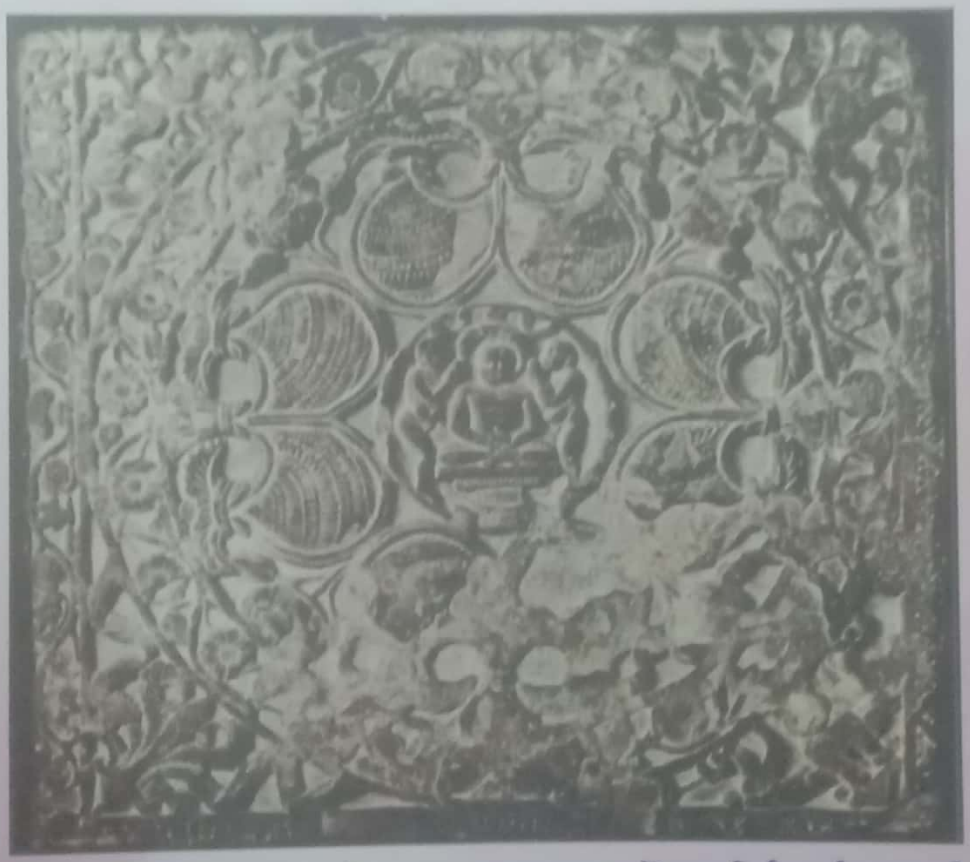

कंकाली टीला मथुरा से प्राप्त आयागपट्ट में उत्कीर्ण अर्हत् पार्श्व की प्राचीनतम दुर्लभ प्रतिमा पूर्वकुषाणकालीन द्वितीय सदी पूर्वार्द्ध

लेख— नमो अरहनतान्.....शिव घोस (T).....आयाग

—लखनऊ संग्रहालय में सुरक्षित

Scanned with CamScanner

अनुक्रम

क्र.सं.	शीर्षक	लेखक	पृ.सं.
1.	मंगलाचरण : ध्यान में देश-काल-आसनादि का नियम		3
2.	सम्पादकीय : भक्तामर स्तोत्र आखिर क्यों महान है?	प्रो. वीरसागर जैन	4
3.	धर्म का अर्थ सम्प्रदाय नहीं	आचार्य विद्यानन्द मुनिराज	12
4.	जैन योग में यम एवं नियम	आचार्य श्रुतसागर मुनिराज	14
5.	आचार्य शान्तिसागरजी के सरल उपदेश	प्रो. कल्पना जैन	28
6.	तिलोयपण्णत्ति में मुनिसुव्रतनाथ	प्रो. अनेकान्त कुमार जैन	32
7.	स्वस्थ जीवन का आधार : प्रतिक्रमण	डॉ. समणी संगीतप्रज्ञा	36
8.	आचार्य वीरसेन स्वामी और उनकी जयधवला टीका का वैशिष्ट्य	डॉ. इन्दु जैन	47
9.	मध्य प्रदेश में जैन धर्म का विकास	डॉ. मो. मंजर अली	56
10.	निःशस्त्रीकरण की आवश्यकता	डॉ. शुद्धात्मप्रकाश जैन	67
11.	जैन सिद्धांत में कारण-कार्य भाव	डॉ. कुलदीप कुमार	70
12.	भगवान महावीर की जन्मभूमि वासोकुण्ड के प्रमाण	डॉ. राजेन्द्रकुमार बंसल	75
13.	वैशालिक भगवान महावीर का मूल्यात्मक चिंतन	डॉ. ऋषभचन्द्र 'फौजदार'	85
14.	समाचार-दर्शन		93

जैन न्याय पर प्रकाशित हुई एक पठनीय कृति

भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली से अभी-अभी जैन न्याय की एक महत्त्वपूर्ण कृति प्रकाशित होकर आई है– 'जैन-न्याय-प्रदीपिका'। प्रो. वीरसागर जैन द्वारा लिखित इस कृति में उनके जैन न्याय से सम्बन्धित 48 लेखों का संग्रह है। जैसे कि– जैन न्याय का प्राथमिक परिचय, न्यायशास्त्र के अध्ययन की आवश्यकता, न्यायशास्त्र की दैनिक जीवन में उपयोगिता, मिथ्यात्व के नाश में न्यायशास्त्र की भूमिका,सर्वज्ञसिद्धि, अनेकांत-स्याद्वाद, प्रमेय का स्वरूप, हेतु और हेत्वाभास, कारण-कार्य-व्यवस्था, निक्षेप-विमर्श, जैन न्याय का संक्षिप्त लक्षणकोश, शब्दकोश, आदि। जैन न्याय प्रायः बहुत कठिन और नीरस माना जाता है, परन्तु इस कृति में उसे बहुत ही सरल और सरस शैली में प्रस्तुत किया गया है। न्यायविद्या एक अत्यंत प्रयोजनभूत और उत्कृष्ट विद्या है। यह कृति उसके जिज्ञासुओं के लिए वरदानस्वरूप है। 288 पृष्ठ की इस कृति का मूल्य 335 रुपये रखा गया है।

Scanned with CamScanner

जैन सिद्धांत में कारण-कार्य भाव

—डॉ. कुलदीप कुमार*

भारतवर्ष प्राचीन काल से ही अनेक संस्कृतियों का संगम-स्थल रहा है। इनमें प्रमुखतः दो संस्कृतियाँ अजस्र प्रवाहमान हैं, जिन्हें ब्राह्मण संस्कृति और श्रमण संस्कृति के नाम से अभिहित किया जाता है। ब्राह्मण संस्कृति में सांख्य-योग, न्याय-वैशेषिक, वेदान्त-मीमांसा दर्शनों का समावेश किया जाता है, जबकि श्रमण संस्कृति में जैन-बौद्ध दर्शनों को समाहित किया जाता है। वेदों को प्रमाण मानने के कारण ब्राह्मण दर्शनों को वैदिक दर्शन तथा वेदों को प्रमाण न मानने के कारण श्रमण दर्शनों को अवैदिक दर्शन भी कहा जाता है।

श्रमण संस्कृति में जैनदर्शन का अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। जैन दर्शन का मूलाधार जिनोपदेश है, जिसके मूल स्तम्भ हैं– आचार में अहिंसा, व्यवहार में अपरिग्रह तथा विचार में अनेकांत। अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकांत को अकारत्रय के नाम से अभिहित किया जाता है तथा ये जैनसंस्कृति की ऐसी विशेषताएँ हैं, जो वर्तमान समाज में व्याप्त हिंसा, संग्रह की मनोवृत्ति तथा 'मेरा सो खरा' रूप दुराग्रह की जो समस्याएँ हैं, उनका समाधान करती हैं।

कार्य-कारण-व्यवस्था समस्त भारतीय दर्शनों का एक प्रमुख विषय रहा है, अतः जैनाचार्यों ने भी इस विषय पर गूढ़ एवं गंभीर चर्चा की है। मैं यहाँ पर उसी का कुछ अंश प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहा हूँ।

कारण और कार्य का अर्थ-

कारण शब्द संस्कृत में कृ+णिच्+ल्युट् से निष्पन्न हुआ है। इसके अनेक अर्थ हैं। यथा– हेतु, तर्क, आधार, प्रयोजन, उद्देश्य, उपकरण, साधन आदि। नैयायिकों के अनुसार इसके तीन भेद हैं– 1. समवायि (घनिष्ठ और अंतर्निहित)– जैसे कि

*अध्यक्ष, जैनदर्शन विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, मो. 9560250117

Scanned with CamScanner

UGC CARE LISTED

ISSN 2278-0416

हरिप्रभा

अन्ताराष्ट्रिया मूल्याङ्किता त्रैमासिकी शोधपत्रिका

PEER REVIEWED, REFEREED, OPEN ACCESS, INDEXED
INTERNATIONAL QUARTERLY RESEARCH JOURNAL (UGC CARE LISTED)

वर्षम् : १६, अंङ्क : ०७-०६, जुलाई - सितम्बर - २०२२

हरित्वता वर्चसा सूर्यस्य श्रेष्ठै रूपैस्तन्वं स्पर्शयस्व।
अस्माभिरिन्द्र सखिभिर्हुवानः सध्रीचीनो मादयस्वा निषद्य॥
(ऋक् १०/११२/३)

हरियाणा – संस्कृत – अकादमी, पंचकूला

Scanned with CamScanner

११. स्मृतिषु धर्मचिन्तनम् ६९
-जयपालः शास्त्री

१२. योगवेदान्तदर्शनयोर्योगाङ्गविमर्शः ७६
-डॉ. प्रीतमसिंहः

१३. काव्यशास्त्रे गुणविमर्शः ८५
-डॉ. राजकुमारः

१४. मम्मटाभिमतकाव्यलक्षणविमर्शः ९३
-तुलसीदासः परौहा

१५. काव्यसम्भवे हेतुविचारः ९८
-श्री सुशान्तः शर्मा

१६. जैनसाहित्यस्य महत्त्वम् १०४
-डॉ. कुलदीपकुमारः

१७. रघुवंशमहाकाव्ये युद्धविज्ञानम् ११०
-भोलेश्वरप्रधानः

१८. महाभारतस्य शान्तिपर्वणि वर्णितस्य राजधर्मस्य स्वरूपम् १२०
-डॉ. नरेन्द्रकुमारपाण्डेयः

१९. श्रीमद्भगवद्गीतादृष्टौ ज्ञान-कर्म-भक्ति-योगानां तात्विकविवेचनम् १२५
-श्री राजेश कुमार

*****

Scanned with CamScanner

वर्षम्-१९, अङ्कः-७-९ (२०२२) ISSN 2278-0416

जैनसाहित्यस्य महत्त्वम्

प्रो. कुलदीपकुमारः

भारतीयदर्शनस्येतिहासे जैनदर्शनस्य महत्त्वपूर्णस्थानमस्ति। विभिन्नैः दार्शनिकैः स्व स्वाभाविकिरुच्या परिस्थित्या भावनायाः च यथा वस्तुतत्त्वं दृष्टं तदेव दर्शननाम्ना अभिहितम्। किन्तु अभेदभावः, नित्यैकान्तत्वम्, क्षणिकैकान्तत्वम् इत्येषु ऐकान्तिकी दृष्टिरस्ति। जैनदर्शनानुसारं प्रत्येकवस्तु अनेकान्तस्याद्वादनाम्ना जैनदर्शनं स्वीकरोति। जैनदर्शनस्य उद्देश्यं स्याद्वादसिद्धान्तस्य आधारेण विभिन्नमतानां समन्वयोऽस्ति। विचारजगतः अनेकान्तसिद्धान्त एव नैतिकजगति अहिंसायाः रूपं धारयति। अतः भारतीयपाश्चात्यदर्शनानाम् इतिहासं ज्ञातुं स्मर्तुं वा जैनदर्शनस्य विशेषतो महत्त्वमस्ति।

भारतीयधार्मिकविचारधारा मुख्यरूपेण भागद्वये विभक्तास्ति। श्रमणविचारधारा ब्राह्मणविचारधारा च। ब्राह्मणविचारधारा ब्रह्मणः समीपं भ्रमति एवमीश्वर एव सृष्टिकर्ता संहारकर्ता धारणकर्ता, व्यक्तेः भाग्यविधाता च वर्तते। श्रमणविचारधारा स्वकीयपुरुषार्थद्वारा पुष्टा भवति तत्र ईश्वरः नास्ति सृष्टिकर्ता, धर्ता, हर्ताश्च। वस्तुतः प्रत्येकः प्राणी स्वतन्त्रतया सर्वोच्चावस्थां प्राप्तुं शक्नोति। एते द्वे विचारधारे प्राचीनकालादेव साम्प्रतमपि दरीदृश्येते।

'श्रमण' शब्दः 'सम' एवं 'शम' इत्युभयोः द्योतकः अस्ति। जैनश्रमणधर्मः उभयोः समर्थनं करोति। प्राचीनसाहित्यं पश्यामश्चेत् स्पष्टं भवति यत् श्रमणविचार-धारायाः पोषकाः केचन् अन्येऽपि सम्प्रदायाः अभवन्। परन्तु तेषु श्रमणसम्प्रदाय एव प्राचीनतमेति वक्तुं शक्यते। प्राचीनतमवैदिकसाहित्ये उपलब्धप्रमाणमुपर्युक्तकथनस्य समर्थनं करोति। यथा-

नाभेः पुत्रश्च ऋषभः ऋषभाद् भरतोऽभवत्।
तस्य नाम्ना त्विदं वर्ष भारतं चेति कीर्त्यते॥[१]

---

१. स्कन्दपुराणम्, कौमारखण्डः, ३७/५७

Scanned with CamScanner

स्थापित जुलाई 1988

ISSN No. 0971-796X

प्राकृतविद्या

वर्ष 36, अंक 1

जनवरी-मार्च 2023 ई.

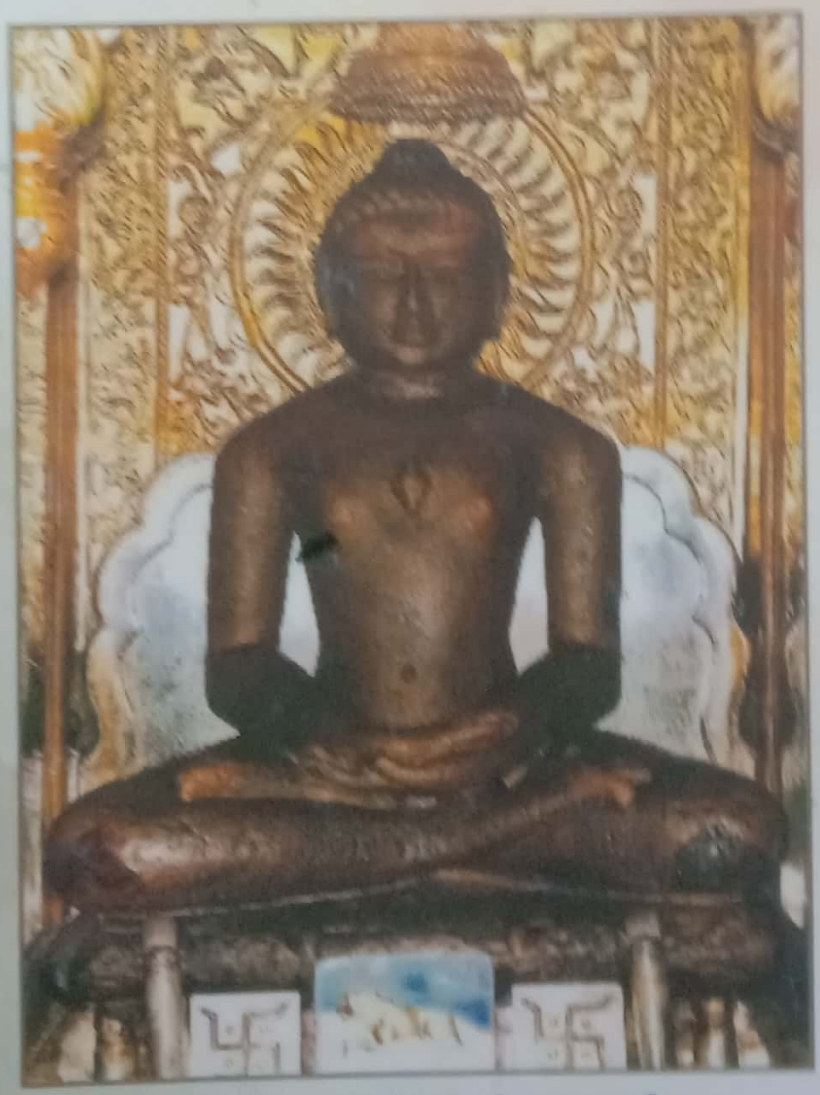

शासननायक तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर

Scanned with CamScanner

अनुक्रम

क्र.सं.	शीर्षक	लेखक	पृ.
1.	मंगलाचरण : कुन्दकुन्दाष्टकम्	ब्र. कपिल भैया	
2.	सम्पादकीय : तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर और उनकी शिक्षाएँ	प्रो. वीरसागर जैन	
3.	देवदर्शन से भेद-विज्ञान	आचार्य विद्यानन्द मुनिराज	1
4.	जैन दर्शन में वनस्पति-विज्ञान	आचार्य श्रुतसागर मुनिराज	2
5.	अपभ्रंश का अभिनव चरित ग्रन्थ : संतिणाहचरिउ	प्रो. प्रेम सुमन जैन	3
6.	शाश्वत ज्ञान की विरासत— हस्तलिखित पांडुलिपियाँ.....	वैराग्यरति विजय	3
7.	जैनदर्शन में प्राण का स्वरूप	मुनि आलोक कुमार	4
8.	आचार्य सुनीलसागर की रचनाओं में जीवन-मूल्य	ब्र. विनय कुमार जैन	5
9.	श्रावक और उसके आठ मूलगुण	प्रो. कुलदीप कुमार	5
10.	अनेकान्तवाद-विमर्श	प्रताप शास्त्री	6
11.	'पंडित-पूजा' ग्रन्थ के संदर्भ में 'पंडित' एवं 'पूजा' शब्दों का समालोचनात्मक अध्ययन	अंकुर जैन	7
12.	पाण्डे राजमल्लजी के व्यक्तित्व की विशेषताएँ	छवि जैन	8
13.	समाचार-दर्शन		8

भगवान महावीर का मूल सन्देश : अहिंसा

जीववहो अप्पवहो, जीवदया होदि अप्पणो हु दया।
विसकंटोव्व हिंसा, परिहरिदव्वा तदो होदि॥
जह ते ण पियं दुक्खं, तहेव तेसिं पि जाण जीवाणं।
एवं णच्चा अप्पोवमियो जीवेसु होदि सदा॥

—आचार्य शिवकोटि, भगवती आराधना, गाथा 775-77

अर्थ– जीववध आत्मवध है और जीवदया आत्मदया है, अतः हिंसा को विषकंटक के समान जानकर छोड़ देना चाहिए। जैसे तुम्हें दुःख प्रिय नहीं है, वैसे ही अन्य जीवों को भी दुःख प्रिय नहीं है, अतः उनसे आत्मवत् व्यवहार करो।

Scanned with CamScanner

श्रावक और उसके आठ मूलगुण

—प्रो. कुलदीप कुमार

जनधर्म-दर्शन में आराधना के दो प्रमुख मार्गों का वर्णन उपलब्ध होता है। प्रथम मार्ग को अनगार या श्रमण मार्ग कहा जाता है। इस मार्ग में साधक सभी सांसारिक बन्धनों का परित्याग करके केवल आत्मकल्याण की स्थापना में संलग्न रहता है। यह मार्ग आत्मकल्याण की दृष्टि से श्रेय होते हुए भी सरल नहीं है, अतः सभी आत्मकल्याणार्थी इस मार्ग को स्वीकार करने में समर्थ नहीं हो पाते हैं। ऐसे साधकों के लिए दूसरे गृहमार्ग का उल्लेख किया गया है। इस मार्ग में साधक घर में रहते हुए सांसारिक उत्तरदायित्वों को निभाते हुए साधना के मार्ग का अनुसरण करता है, इसीलिए इस मार्ग का नाम आगारधर्म रखा गया है। जैन वाङ्मय में ऐसे साधक को उपासक, श्रावक, देशसंयमी, आगारी, अणुव्रती, व्रताव्रती, विरताविरत, देशविरत, श्रमणोपासक, श्राद्ध और संयमासंयमी इत्यादि नामों से जाना जाता है। यद्यपि सामान्यतः ये सब पर्यायवाची माने जाते हैं, फिर भी यौगिक दृष्टि से इनके अर्थों में परस्पर विशेषताएँ हैं।

'उपासक' शब्द उप + 'आस्' + ण्वुल् प्रत्यय से निष्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है– सेवा में उपस्थित पूजा करने वाला, सेवक, अनुचर।[1] 'अध्ययनम्' शब्द अधि + इ+ ल्युट् प्रत्यय से निष्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है– सीखना, जानना, पढ़ना इत्यादि।[2] उपासकाध्ययन विषयक ग्रन्थों में उपासक शब्द का अर्थ उपासना करने वाला किया गया है अर्थात् जो अपने इष्ट देव, गुरु, धर्म की उपासना अर्थात् सेवा, वैयावृत्त्य और आराधना करता है, उसे उपासक कहते हैं। गृहस्थ मनुष्य वीतराग देव की नित्य पूजा-उपासना करता है। निर्ग्रन्थ गुरुओं की सेवा-वैयावृत्य में नित्य तत्पर रहता है और सत्यार्थ धर्म की आराधना करते हुए उसे यथाशक्ति धारण करता है, अतः उसे उपासक कहा जाता है।[3]

श्रावक शब्द का अर्थ– संस्कृत भाषा के अनुसार 'श्रावकः' शब्द 'श्रु' धातु

अध्यक्ष, जैनदर्शन विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, मो. 9560250117

Scanned with CamScanner

UGC CARE LISTED

ISSN 2278-0416

हरिप्रभा

अन्ताराष्ट्रिया मूल्याङ्किता त्रैमासिकी शोधपत्रिका

PEER REVIEWED, REFEREED, OPEN ACCESS, INDEXED
INTERNATIONAL QUARTERLY RESEARCH JOURNAL (UGC CARE LISTED)

वर्षम् : २०, अङ्कः १०-१२, अक्टूबर - दिसम्बर - २०२३

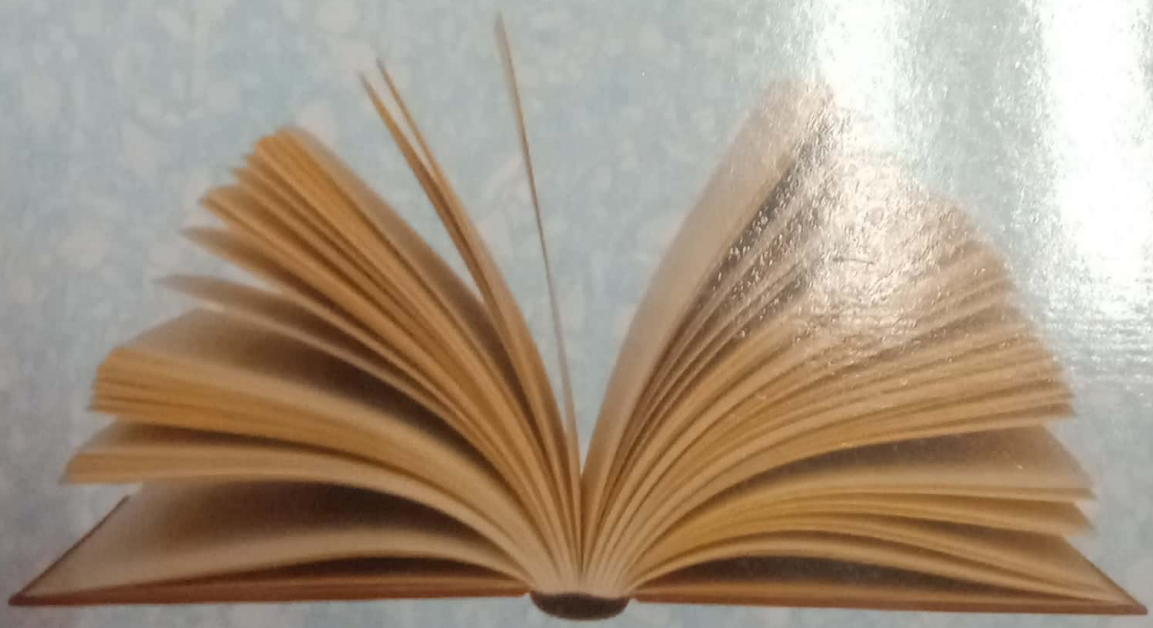

हरित्वता वर्चसा सूर्यस्य श्रेष्ठै रूपैस्तन्वं स्पर्शयस्व।
अस्माभिरिन्द्र सखिभिर्हुवानः सध्रीचीनो मादयस्वा निषद्य॥
(ऋग्वेद १०/११२/३)

हरियाणा-साहित्य-संस्कृति-अकादमी, पञ्चकूला

Scanned with CamScanner

१०. जैनदर्शने सम्यग्दर्शनविवेचनम् ८१
-प्रो. कुलदीपकुमारः

११. सिद्धे शब्दार्थसम्बन्धे ९४
-शिवदत्त त्रिपाठी

१२. संस्कृतवाङ्मयसंरक्षणसंवर्धने बीकानेरमहाराजानूपसिंहस्यावदानं तस्य प्रासंगिकता च १०२
-रमनदीपः

१३. श्रवणादिश्रुतिविषये भामतीकारमतवैशिष्ट्यम् ११०
-डॉ. तुलसीकुमारः जोशी

१४. समीचीनोच्चारणाय भाषाप्रयोगशाला ११७
-डॉ. जोगेश्वरमहान्तः

*****

Scanned with CamScanner

'हरिप्रभा' वर्षम्-२०, अङ्कः-१०-१२ (२०२३) ISSN 2278-0416

जैनदर्शने सम्यग्दर्शनविवेचनम्

*प्रो. कुलदीपकुमारः

सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि, धर्म धर्मेश्वरा विदुः।
यदीयप्रत्यनीकानि, भवन्ति भवपद्धतिः॥

भारतीय दर्शनस्य इतिहासे जैनदर्शनस्य महत्त्वपूर्णस्थानं विलसति। अस्य दर्शनस्य प्राचीनानि अनेकानि अभिधानानि विलसन्ति। यथा- अर्हत्दर्शनं, श्रमणदर्शनं, निर्ग्रन्थदर्शनं, जिनदर्शनं, वीतरागदर्शनं, स्याद्वाददर्शनम्, अहिंसादर्शनम् अनेकान्तदर्शनं इत्यादीनि। संसारस्य सर्वाणि दर्शनानि मुक्त्यर्थम् अनेकविधान् उपायान् प्रवदन्ति। कश्चित् भक्तिपूर्वकम्, कश्चित् ज्ञानेन उत वा कठोरतपाचरणेन मोक्षस्य मार्गं वदति। किन्तु जैनदर्शने आचार्येण उमास्वामिना तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थे प्रथमसूत्रे प्रतिपादितं यत्-

''सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः।[१]''

सम्यग्दर्शनस्य सम्यग्ज्ञानस्य सम्यक्चारित्रस्य च एकरूपता एव मोक्षमार्गः अस्ति। अर्थात् एतेषां त्रयाणां योगेनैव मोक्षमार्गः भवति। यदि एकमपि नास्ति तर्हि मोक्षपदं प्राप्तुं न शक्यते। यथा- दीपकः वर्तिका तैलम् एतेषां त्रयाणां संयोगात् एव अन्धकारस्य विनाशः भवितुमर्हति- एतेषां भिन्नत्वेन न। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि एव **'रत्नत्रयम्'** इत्युच्यते।

सम्यग्दर्शनं जैनदर्शनस्य मूलाधारो वर्तते। मूलम् अर्थात् **'जड़'** इति आधारो वा।

'दंसण मूलो धम्मो।'

इदं धर्मवृक्षस्य मूलमस्ति। मूलं विना वृक्षस्य कल्पना अपि न कर्तुं शक्यते। सम्यग्दर्शनं **'छड़ढाला'** पुस्तके 'मोक्षमहल की प्रथम सीढ़ी' इत्युक्तम्।

---

* आचार्यः जैनदर्शनविभागः, श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः, नवदेहली-१६ मो.- ९५६०२५०११७, ई. मेल- kuldeepkumar30@gmail.com

१. आचार्य उमास्वामी, तत्त्वार्थसूत्रम्, १/१

Scanned with CamScanner

UGC - CARE LISTED

ISBN: 0974-8946

अनुसन्धान-प्रकाशन-विभागीया त्रैमासिकी शोध-पत्रिका

शोध-प्रभा

(A Refereed & Peer-Reviewed Quarterly Research Journal)

48 वर्षे तृतीयोऽङ्कः (जुलाई-सितम्बर) 2023 ई.

प्रधानसम्पादकः

प्रो. मुरलीमनोहरपाठकः

कुलपतिः

सम्पादकः

प्रो. शिवशङ्करमिश्रः

शोधविभागाध्यक्षः

सहसम्पादकः

डॉ. ज्ञानधरपाठकः

श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः

(केन्द्रीयविश्वविद्यालयः)

नवदेहली-16

Scanned with CamScanner

विषयानुक्रमः

संस्कृतविभागः

1. शाब्दिकाभिमतो नामार्थविचारः 1-7
   - डॉ. गोविन्दपौडेलः
2. मम्मटीयगूणीभूतव्यङ्ग्यस्योपजीव्यत्वविचारः 8-20
   - डॉ. राजकुमारमिश्रः
3. निरुक्तमतेन जातिपदार्थविचारः 21-27
   - डॉ.बद्रीनारायणगौतमः
4. इण्डोनेशियायाः वायांगसाहित्ये भारतीयनाट्यपरम्परायाः प्रभावः 28-41
   - डॉ. ललितपाण्डेयः
5. जैनसंस्कृतौ पर्वाणि 42-47
   - प्रो. कुलदीपकुमारः

हिन्दी विभाग

6. भाट्टमत में श्रुतार्थापत्ति प्रमाण का निरूपण 48-54
   - डॉ. ठाकुर शिवलोचन शाण्डिल्य
7. लास्य-स्वरूप निरूपण 55-66
   - डॉ. मुकेश कुमार मिश्र
8. श्रीमद्भगवद्गीता में निहित बुद्धि की अवधारणा एवं प्रकारों का अध्ययन 67-74
   - डॉ. सुरेन्द्र महतो

Scanned with CamScanner

जैनसंस्कृतौ पर्वाणि

- प्रो. कुलदीपकुमारः*

भारतीयसंस्कृतौ जैनसंस्कृतेरेकं विशिष्टं स्थानं वर्तते। इयम् अतीव प्राचीना औदार्ययुता व्यावहारिकसंस्कृतिश्चास्ति। अनया न केवलं धर्मस्य दर्शनस्य अध्यात्मस्य च चर्चा क्रियते, अपितु अस्माकं सामाजिकं पारिवारिकं चापि जीवनम् उत्तमं निर्मातुं उपायान् प्रस्तौति इयं संस्कृतिः।

प्रारम्भत एव अस्माकं तीर्थङ्करैः सामाजिकव्यवस्थानिमित्तं मार्गदर्शनं कृतम्। भवतु नाम कृषिः, सुरक्षा, भाषा, च सर्वेभ्यः विषयेभ्यः तीर्थङ्करैः मूल्यात्मकदिशा प्रदत्ता। 'पर्व' मूल्यात्मकसामाजिकव्यवस्थाया एक आयामः वर्तते।

'पर्व' शब्दस्यार्थः - पर्व शब्दः पृ+वनिप् प्रत्ययेन निष्पन्नोऽस्ति। संस्कृतभाषायाम् अयं शब्दः नपुसंकलिङ्गे अस्ति।[1] पर्वशब्दस्य अर्थोऽस्ति पवित्रः, अवसरः, (Good Time), उत्तमं दिनम्। इक्षुदण्डे अङ्गुल्यां वा यानि पर्वाणि विभक्तभागाः वा (पोर) भवन्ति, तानि अपि पर्वाणि उच्यन्ते। अर्थात् पर्व तदवस्था वर्तते, यतः अस्माकं जीवनम् अग्रे वर्धते। पर्व मार्गदर्शकमस्ति, दिशासूचकमस्ति, तथा च एकस्थानपर्यन्तम् अग्रे नेतुं निमित्तं वर्तते।

'पर्व' शब्दस्य पर्यायवाचिनः - पर्वशब्दस्य अनेके पर्यायवाचिनः सन्ति। यथा- अवयवः, खण्डः, भागः, पुस्तकम्, अभ्यसः, उत्सवश्चे।[2] उत्सवः Festival वेति। 'उत्स' इत्यस्यार्थः वर्तते उत्सेकः (फव्वारा) अर्थात् यत्र आनन्दस्य उत्सेकः भवति, सः उत्सवः भवति। उत्सवदिवसे अस्मद्हृदये उत्सेकः प्रभवति।

पर्वणां जीवने महत्त्वम्- पर्वाणि विशेषेण मानवहृदये उत्साहम् आनन्दञ्च सञ्चारयन्ति। वाल्मीकिरामायणे उक्तमस्ति- नाराजके जनपदे प्रभूतनटनर्तकाः **"उत्सवाः समाजाश्च वर्धन्ते राष्ट्रवर्धनाः।"**[3] अर्थात् यस्मिन् समाजे उत्सवानाम् आयोजनं भवति, तत्र वृद्धिसमृद्धी आयातः। अस्माकं पूर्वजैः नैके उत्सवाः निर्मिताः - 'सातवार नौ त्यौहार' 'सप्तवाराणि नवोत्सवाः' लोकोक्तिरियं प्रचलिता सञ्जाता। यस्मिन् गृहे उत्सवायोजनं न भवति, तस्मिन् शोकायोजनं भवति। उत्सव-'थेरेपी' इतीदम् अस्ति। रुग्णो जनोऽपि

* आचार्यः (जैनदर्शनविभागः), श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः, नवदेहली

1. वामनशिवराम आप्टे, संस्कृतहिन्दीकोश, पृष्ठ-595, संस्करण-2010
2. तत्रैव
3. वाल्मीकिरामायणं, अयोध्याकाण्डं, सर्गः 67, श्लोकः 15

Scanned with CamScanner